चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 12 जून- 18 जून 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

केजरीवाल की अनसुनी कहानी

राजनीति में किसी दल या व्यक्ति के लिए मर्सिया पढ़ने का रिवाज नहीं है. वजह, कब कौन कहां से धूल-मिट्टी झाड़ते हुए फिर से मैदान में आ डटे, किसी को पता नहीं होता. इस लिहाज से आम आदमी पार्टी के अंत की भविष्यवाणी करना या अरविंद केजरीवाल की शौर्य गाथा का बखान करना, दोनों खतरे से खाली नहीं हैं. लेकिन 5 साल पुरानी पार्टी से जुड़े कुछ ऐसे सवाल, कुछ ऐसी कहानियां जरूर हैं, जिसे जानना न सिर्फ दिलचस्प है, बल्कि जरूरी भी है. पढ़िए, चौथी दुनिया की खास रिपोर्ट :

शशि शेखर

ये घटना एमसीडी चुनाव परिणाम आने से पहले की है. दिल्ली की सुन्दर नगरी से ही अरविंद केजरीवाल ने सबसे पहले सोशल एक्टिविज्म शुरू किया था. जाहिर है, यहां के सैकड़ों ऐसे लोग हैं, जो अरविंद केजरीवाल को और अरविंद केजरीवाल इन लोगों को व्यक्तिगत तौर पर जानते हैं. आज भी पार्टी में इस क्षेत्र के काफी लोग सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं. उसी सुंदर नगरी के कुछ लोग अरविंद केजरीवाल से मुलाकात का समय चाह रहे थे. ये लोग बार-बार एप्वायंटमेंट लेने के लिए मुख्यमंत्री आवास जा रहे थे. लेकिन इन्हें न तो एप्वायंटमेंट मिल रहा था और न ही अरविंद केजरीवाल से मुलाकात हो पा रही थी. काफी दिनों बाद ये लोग अरविंद केजरीवाल की पत्नी सुनीता केजरीवाल तक अपनी बात पहुंचाने में सफल होते हैं. जैसे ही अरविंद केजरीवाल को अपनी पत्नी के माध्यम से यह पता चलता है कि सुन्दर नगरी के लोग उनसे मिलने की कोशिश कर रहे हैं और उन्हें एप्वायंटमेंट नहीं मिल पा रहा है, वे गुस्से में आ जाते हैं. आनन फानन में उन लोगों को मुख्यमंत्री आवास बुलाया जाता है और अरविंद केजरीवाल इन लोगों से मिलते हैं. इस छोटी सी कहानी का सार ये है कि सत्ता वो शय है, जो कई बार आपको खुद की खबर भी नहीं लगने देती. ऐसा ही कुछ अरविंद केजरीवाल के साथ भी हुआ. लेकिन सवाल ये है कि जिस सत्ताई एलिटिजम के खिलाफ आप खड़े हुए, खुद उसी में कैसे फंस गए? फंस गए इसलिए, क्योंकि जाहिर तौर पर सुंदर नगरी के उन लोगों को एप्वायंटमेंट न देने के पीछे कुछ ऐसे लोगों की संलिप्तता रही होगी, जो ये तय करने में खुद इतने सक्षम हैं कि अरविंद केजरीवाल को किससे मिलना है और किससे नहीं मिलना है.

इस कहानी से 'आप' की कहानी शुरू करने की जरूरत क्यों पड़ी? इसलिए कि अगर आम आदमी पार्टी की समीक्षा सिर्फ उन तर्कों और तथ्यों के सहारे की जाए, जो सालों से मीडिया और सोशल मीडिया में तैर रहे हैं, तो ये समीक्षा, समीक्षा न रह कर कुछ और बन जाएगी. चौथी दुनिया ने अपनी पड़ताल में कुछ ऐसे नए तथ्य और कहानियों को सामने लाने की कोशिश की है, जिनके जरिए आम आदमी पार्टी की मौजूदा स्थिति को बेहतर तरीके से समझा जा सकता है. मसलन, गोवा और पंजाब में किन नेताओं का अहम पार्टी की हार का कारण बना. महज 313 जिलों में जिस पार्टी की डिस्ट्रिक्ट कमेटी थी, उसने 400 से अधिक लोकसभा क्षेत्रों में चुनाव लड़ने का साहस क्यों और कैसे किया? संगठनात्मक स्तर पर पहले क्या गलतियां हुईं और अब उसे सुधारने की क्या कोशिशें हो रही हैं आदि.

पंजाब से किसने केजरीवाल को मिसलीड और मिसगाइड किया किसने चलाई अपनी मर्ज़ी

गोवा में जब पंकज गुप्ता प्रभारी थे तब आशीष तलवार को किसके कहने पर गोवा भेजा गया

गुजरात -राष्ट्रपति चुनाव को लेकर क्या रहेगा रुख, क्या विपक्षी एकता के हिमायती नहीं हैं केजरीवाल

313 जिलों में जिला कमेटी, फिर 400 लोकसभा क्षेत्रों से उम्मीदवार किसने उतारे

सबसे पहले इस तथ्य पर नजर डालते हैं कि आम आदमी पार्टी ने ऐसी क्या उम्मीदें जगाई थी, जिस पर जनता ने भरोसा कर के उसे दो-दो बार दिल्ली की गद्दी सौंपी. जनता को उम्मीद थी कि आम आदमी पार्टी राजनीति का बेहतर और स्वच्छ विकल्प बनेगी. पार्टी पारदर्शी तरीके से काम करेगी. चन्दे से लेकर टिकट वितरण तक में पारदर्शिता आएगी, जिससे आम आदमी की राजनीति में सहभागिता बढ़ेगी. ये पार्टी भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई लड़ेगी. आम आदमी पार्टी की सरकार जन समस्याओं पर ध्यान देगी. सत्ता का विकेन्द्रीकरण होगा. लेकिन 49 दिनों की सरकार के बाद जब अचानक आम आदमी पार्टी ने लोकसभा चुनाव लड़ने की घोषणा की, तब 'आप' के मतदाताओं को एक झटका लगा. जनता ने तो दिल्ली की सरकार चलाने के लिए इन्हें जनादेश दिया था. फिर सरकार से निकलने और लोकसभा चुनाव लड़ने की घोषणा का क्या अर्थ था? यहां सवाल ये भी है कि एक अपेक्षाकृत नई पार्टी के पास क्या राष्ट्रीय स्तर पर ऐसा कोई मजबूत संगठन था, जिसके सहारे इसने देश भर के 400 से अधिक लोकसभा क्षेत्रों से चुनाव लड़ने की हिम्मत दिखाई?

दरअसल, लोकसभा चुनाव से पहले आम आदमी पार्टी के तब के संरक्षक शांति भूषण ने दिल्ली के कांस्टीट्यूशन क्लब में एक जोशीला भाषण देते हुए कहा था कि जनता बार-बार मौका नहीं देती. इसलिए हमें इस मौके को नहीं गंवाना चाहिए. तब पार्टी के वरिष्ठ नेता योगेन्द्र यादव भी चाहते थे कि पार्टी देश भर में लोकसभा का चुनाव लड़े. पार्टी ने तैयारी शुरू की. संगठन से जुड़े लोगों की सूची निकाली गई. पता चला कि सिर्फ 313 जिलों में ही पार्टी की डिस्ट्रिक्ट कमेटी बन पाई है. ध्यान देने की बात यह है कि इन जिला कमेटियों में ज्यादातर ऐसे लोग थे, जो अन्ना आंदोलन के वक्त जुड़े थे और बाद में पार्टी बनने पर पार्टी की जिला इकाई से जुड़ गए. दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु जैसे कुछ जगहों के अलावा कहीं भी पार्टी का मजबूत संगठन नहीं था. छिटपुट तरीके से कुछ नाम जरूर पार्टी के साथ जुड़े हुए थे, वो भी सिर्फ लोकसभा का चुनाव लड़ने के लिए. इसके बावजूद, योगेन्द्र यादव की सलाह पर आम आदमी पार्टी ने 400 से अधिक लोकसभा क्षेत्रों से अपने उम्मीदवार उतार दिए. खुद केजरीवाल बनारस से चुनाव लड़ने चले गए. चुनाव नतीजा आया, तो पता चला कि बनारस और पंजाब को छोड़ कर तकरीबन हर सीट पर पार्टी की जमानत जब्त हो गई. जाहिर है, अन्ना आंदोलन से केजरीवाल को जो ग्लैमर हासिल हुआ था, वो लोकसभा चुनाव के परिणाम में नहीं बदल पाया. इसके अलावा, तत्कालीन राजनीतिक माहौल भी ऐसा था, जहां चुनाव लड़ने का दांव भी राजनीतिक रूप से आम आदमी पार्टी के लिए उल्टा पड़ गया. मीडिया और जनता के बीच केजरीवाल को भगोड़ा तक कहा जाने लगा.

पर्सेप्शन की लड़ाई में पिछड़े

लेकिन तब भी दिल्ली की जनता का विश्वास शायद आम आदमी पार्टी से पूरी तरह से डिगा नहीं था. नतीजतन, लोकसभा चुनाव के एक साल बाद ही दिल्ली में फिर से विधानसभा के चुनाव हुए और जनता ने आम आदमी पार्टी को दूसरा मौका दिया. पार्टी ने 70 में से 67 सीटें हासिल की. लेकिन दो साल बीतते-बीतते ऐसा क्या हुआ कि आम आदमी पार्टी को पंजाब से लेकर गोवा और फिर दिल्ली नगर निगम चुनाव में एक के बाद एक (शेष पृष्ठ 2 पर)

3 आत्मसमर्पण नक्सलियों का या सरकार का

4 बीमा किसान का फ़ायदा कंपनी का

5 अजेय हथियार की तलाश में लालू

6 कश्मीर में सत्ता पर कब्ज़ा भाजपा का मिशन

केजरीवाल की अनसुनी कहानी

पृष्ठ 1 का शेष

जबरदस्त हार का सामना करना पड़ा? दरअसल, इन दो सालों में इस सरकार ने जितने अच्छे काम किए (बिजली-पानी-हेल्थ-एजुकेशन क्षेत्र में) उससे कहीं ज्यादा विवादों में फंसती चली गई. पहले मंत्रियों से जुड़े विवाद, उपराज्यपाल और केन्द्र के साथ तनातनी, मीडिया के साथ खट्टे-मीठे रिश्ते, केंद्र सरकार के खिलाफ हमलावर रवैये आदि की वजह से खुद अरविंद केजरीवाल और उनकी पार्टी के बारे में मीडिया से लेकर सोशल मीडिया तक में एक निगेटिव पर्सेप्शन क्रिएट हुआ. दिल्ली के पूर्ण राज्य न होने के कारण वे उपराज्यपाल के साथ पटरी बिठा कर काम नहीं कर सके, जिससे कई सारे अनावश्यक विवाद भी खड़े हुए. मोदी सरकार पर हमलावर रहने के कारण केजरीवाल और आम आदमी पार्टी की इमेज जनता और मीडिया के बीच सबसे ज्यादा खराब हुई. जनता को लगने लगा कि वे काम कम करते हैं, विवाद की राजनीति अधिक करते हैं. इसका नतीजा एमसीडी चुनाव परिणाम में देखने को मिला.

गुप्ता प्रभारी, तलवार प्रभारी पार्टी हारी

लेकिन दिल्ली से इतर एक बड़ा सवाल पंजाब और गोवा से जुड़ा है. सबसे पहले बात करते हैं, गोवा की. गोवा की कहानी ये है कि पार्टी के राष्ट्रीय सचिव पंकज गुप्ता गोवा के प्रभारी बनाए गए थे. गुप्ता शरीफ और मृदुभाषी नेता हैं. वे चुपचाप अपना काम करते हैं और तिकड़म से दूर रहते हैं. गोवा में पार्टी का अस्तित्व तो था,

पंकज गुप्ता

आशीष तलवार

लेकिन वॉलंटियर्स नहीं थे. दूसरी तरफ, कर्नाटक के आम आदमी पार्टी प्रभारी पृथ्वी रेड्डी के पास वॉलंटियर्स की अच्छी-खासी संख्या है. उस समय उन्होंने अपने करीब 200 फुलटाइम वॉलंटियर्स को गोवा भेजा. महाराष्ट्र से भी वॉलंटियर्स आए. इसके बावजूद, स्थानीय स्तर पर पार्टी गतिविधि में वो तेजी नहीं आ रही थी, जिसकी जरूरत थी. इसके बाद ही, ग्राउंड से मिली एक सिक्रेट

रिपोर्ट के आधार पर अरविंद केजरीवाल ने आशीष तलवार को प्रभारी बनाकर गोवा भेजा. गोवा में पार्टी की हालत यहीं से बिगड़ने लगी. कुमार विश्वास की रैली गोवा में कब हो, कहां हो, कितनी हो, इतनी साधारण सी बात को लेकर भी पंकज गुप्ता और आशीष तलवार के बीच कोऑर्डिनेशन नहीं बन पाता था. पंकज कुछ कहते, तो आशीष कुछ और. इस चक्कर में वॉलंटियर्स भी कन्फ्यूज्ड हो गए. पार्टी ने बहुत देर करते हुए सीएम पद के लिए एल्विस गोम्स का नाम तय किया. अरविंद केजरीवाल और कुमार विश्वास की एक-दो रैली में भीड़ तो जुटी, लेकिन ये भीड़ संगठन क्षमता की वजह से नहीं,

'चौथी दुनिया' को मिली जानकारी के मुताबिक, जिस दुर्गेश पाठक को पंजाब की जिम्मेदारी दी गई, उसने न केवल पार्टी आलाकमान को मिसलीड किया बल्कि पंजाब में संगठन बनाने, उम्मीदवारों के चयन और प्रचार अभियान तक में अपनी मनमर्जी चलाई. दुर्गेश पाठक पंजाब में पार्टी के उप प्रभारी थे और संजय सिंह प्रभारी. लेकिन पाठक वहां चुनाव से करीब एक साल पहले से कैंप किए हुए थे. संजय सिंह वहां तभी जाते थे, जब कोई बैठक आदि करनी होती थी.

बल्कि केजरीवाल और कुमार विश्वास के खुद के ग्लैमर की वजह से आई थी. आम आदमी पार्टी के रोड शो में गिनती के लोग होते थे. अन्य नेताओं की रैली में भी भीड़ नहीं होती थी. केजरीवाल की रैली में आई भीड़ वोट में बदले, इसके लिए पार्टी के पास संगठनात्मक क्षमता मौजूद नहीं थी. संगठन को मजबूत बनाने वाले लोगों के बीच जो आपसी समन्वय चाहिए था, वो भी नदारद था. नतीजा ये हुआ कि गोवा में पार्टी को एक भी सीट नहीं मिली और करारी हार का सामना करना पड़ा.

ओवरकॉन्फिडेंट कैप्टेन के ओवरकॉन्फिडेंट व्यवहार का परिणाम था पंजाब

अब बात पंजाब की. पंजाब में चुनाव से पहले ही मीडिया सर्वे से लेकर तमाम राजनैतिक बहसों में ये बताया जाता था कि आम आदमी पार्टी वहां सबसे आगे है. फिर

संजय सिंह के साथ दुर्गेश पाठक

ऐसा क्या हो गया कि आम आदमी पार्टी पंजाब में तीसरे नंबर की पार्टी बन कर रह गई. दरअसल, एक लाइन में कहें तो पंजाब को जीतने की जिम्मेदारी उन लोगों को सौंप दी गई थी जिन्हें पंजाब का 'प' तक नहीं मालूम था. चौथी दुनिया को मिली जानकारी के मुताबिक, जिस दुर्गेश पाठक को पंजाब की जिम्मेदारी दी गई, उसने न केवल पार्टी आलाकमान को मिसलीड किया, बल्कि पंजाब में संगठन बनाने, उम्मीदवारों के चयन और प्रचार अभियान तक में अपनी मनमर्जी चलाई. दुर्गेश पाठक पंजाब में पार्टी के उप प्रभारी थे और संजय सिंह प्रभारी. लेकिन पाठक वहां चुनाव से करीब एक साल पहले से कैंप किए हुए थे. संजय सिंह वहां तभी जाते थे, जब कोई बैठक आदि करनी होती थी. अरविंद केजरीवाल चुनाव के एक महीने के दौरान वहां नियमित कैंपेन करते रहे. इससे पहले उन्होंने पंजाब में कुछ रैलियां ही की थी. यानि, कुल मिलाकर पार्टी और आलाकमान पंजाब की ग्राउंड रियलिटी के लिए सिर्फ और सिर्फ दुर्गेश पाठक के फीडबैक पर ही निर्भर थे. चुनाव से काफी पहले पंजाब के गांवों की दीवारों को आम आदमी पार्टी के नारों और चुनाव चिन्ह से पाट दिया गया था. जहां देखिए, वहां सिर्फ 'आप'. इससे लोगों को लगा कि पार्टी यहां काफी मजबूत स्थिति में है, लेकिन हकीकत कुछ और ही थी. स्थानीय स्तर पर संगठन बनाने का काम उतने आक्रामक तरीके से नहीं हुआ, जितने आक्रामक तरीके से पंजाब की दीवारों को पार्टी के रंग में रंगने का काम किया गया था. टिकट वितरण का काम भी दुर्गेश पाठक से मिले फीडबैक और संस्तुति के आधार पर ही किया गया. इस मामले में भी दुर्गेश पाठक ने सिर्फ और सिर्फ अपनी मर्जी चलाई.

ऐसे बहुत लोगों को भी टिकट मिल गया जिनके पास सिर्फ बहुत पैसा था. गौरतलब है कि पंजाब विधानसभा चुनाव में आम आदमी पार्टी के उम्मीदवारों ने अच्छा-खासा पैसा खर्च किया. लेकिन इनमें से ज्यादातर ऐसे पैसे वाले उम्मीदवार थे, जो सिर्फ चुनाव लड़ने के लिए मैदान में ताल ठोक रहे थे. इनके पास सामाजिक और राजनीतिक अनुभव नहीं था. वे सिर्फ पैसा खर्च कर सकते थे और किया भी. पार्टी ने दिल्ली से वॉलंटियर्स भेजे, विधायक भेजे, लेकिन दिक्कत ये थी कि इन लोगों को भी वहां जाकर सिर्फ और सिर्फ दुर्गेश पाठक के इशारों पर ही काम करना पड़ता था. वहां कायदे से बूथ मैनेजमेंट के लिए सर्वे करने, लोगों को चिन्हित करने आदि का काम करना था, जो चुनाव होने-होने तक नहीं हो सका था. दिल्ली से गए वॉलंटियर्स, विधायक और वहां के उप प्रभारी दुर्गेश पाठक के बीच कहीं कोई कोऑर्डिनेशन नाम की चीज नहीं थी. सब अपने-अपने हिसाब से काम कर रहे थे. एक और दिक्कत थी. पंजाबी अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपनी पंजाबियत से प्यार करते हैं. दिल्ली से गए वॉलंटियर्स, विधायक और खुद दुर्गेश पाठक इस बात को नहीं समझ पाए. वे स्थानीय स्तर पर युवाओं को अपने साथ जोड़ने में असफल रहे. गांवों के पंजाबी भाषी लोग इनकी हिन्दी सुन कर प्रभावित भी नहीं होते थे. लेकिन शायद दुर्गेश पाठक को ये लगा कि लोकसभा चुनाव के समय जैसे इन्हें झटके में 4 सीटें मिल गई थीं, वैसे ही विधानसभा चुनाव में भी ये बाजी मार लेंगे. लेकिन ऐसी स्थिति आ गई कि चुनाव से दो दिन पहले इनके कई स्थानीय कार्यकर्ता अकाली दल और कांग्रेस के साथ चले गए. नतीजा यह हुआ कि सैकड़ों बूथों पर इनके लोग तक नहीं दिखे. चुनाव नतीजों के बाद, संजय सिंह पर कई तरह के आरोप लगे, वहीं दुर्गेश पाठक साफ बच कर निकल गए. जबकि मुख्य जिम्मेवारी इन्हीं की थी, जिसे निभाने में ये बुरी तरह असफल रहे. आम आदमी पार्टी की पंजाब की हार दरअसल भ्रामक, गलत सूचना और ओवरकॉन्फिडेंट कैप्टेन (दुर्गेश पाठक) के ओवरकॉन्फिडेंट व्यवहार का भी नतीजा है.

क्या विपक्षी एकता के हिमायती नहीं हैं केजरीवाल

हालांकि, ओवरकॉन्फिडेंट होने की ये कहानी सिर्फ यही नहीं थमती और न सिर्फ पंजाब और गोवा से शुरू होती है. इस ओवरकॉन्फिडेंस का शिकार पार्टी का शीर्ष नेतृत्व भी हुआ है. उदाहरण के लिए, मौजूदा राजनीतिक परिदृश्य में जहां विपक्ष एकदम कमजोर पड़ा है और विपक्षी एकता की बात हर जगह से सुनाई दे रही है, वैसी स्थिति में भी अरविंद केजरीवाल और उनकी पार्टी अकेले केंद्र सरकार के खिलाफ लगातार हमलावर बनी है. पिछले दो साल में अरविंद केजरीवाल सिर्फ नीतीश कुमार और ममता बनर्जी से मिले, लेकिन तमाम विपक्ष के नेताओं से दूरी बनाए रहे. पार्टी सिर्फ प्रेस कॉन्फ्रेंस कर मोदी सरकार पर हमले करती रही. नतीजा यह हुआ कि संसद से सड़क तक की लड़ाई में पार्टी अकेली रह गई. हाल में कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी ने विपक्षी नेताओं की एक बैठक बुलाई थी. लेकिन उस बैठक में आम आदमी पार्टी को नहीं बुलाया गया. इसके पीछे राजनैतिक कारण हो सकते हैं. ये हो सकता है कि चूंकि अभी तक की चुनावी लड़ाई में आम आदमी पार्टी ने सीधे-सीधे कांग्रेस और भाजपा को ही टक्कर दिया है. कांग्रेस आम आदमी पार्टी को अपने लिए एक मुखर प्रतिद्वन्द्वी (दिल्ली के नजरिए से) मानती है. शायद केजरीवाल खुद भी ये चाहते हैं कि विपक्ष के साथ मिलने से अच्छा है कि अकेले ही चला जाए, यानि खुद को मोदी के बरक्स पेश किया जाए. हालांकि ये इतना आसान भी नहीं होगा. लेकिन उनकी इस सोच का असर ये हो रहा है कि एक मुखर विरोधी आवाज नक्कारखाने में तूती बन कर रह गई है. अब देखना यह होगा कि राष्ट्रपति चुनाव में पार्टी की क्या भूमिका होती है? आम आदमी पार्टी किसे अपना समर्थन देती है. इससे भी आने वाले वक्त की राजनीतिक तस्वीर बहुत हद तक साफ होगी. लेकिन अब तक की अपनी राजनीति की वजह से आम आदमी पार्टी एक ऐसे पर्सेप्शन की लड़ाई में पिछड़ती जा रही है, जो मीडिया और सोशल मीडिया से बहुत हद तक प्रभावित हो रही है.

भूल सुधारने या छवि सुधारने की कवायद

बहरहाल, पंजाब, गोवा और एमसीडी चुनाव परिणाम के बाद आम आदमी पार्टी को कम से कम यह समझ में आया है कि राजनीति दरअसल पर्सेप्शन की भी एक लड़ाई होती है और इस लड़ाई में वे काफी पिछड़ गए हैं. पार्टी ने एक बार फिर खुद को अपनी पुरानी छवि में

ढालने का काम शुरू कर दिया है. इसके संकेत केजरीवाल की हाल की कुछ गतिविधियों से मिलते हैं. हाल में पंजाब में उनका 4 दिन का दौरा प्रस्तावित था. लेकिन इस 4 दिन के दौरे को उन्होंने 1 दिन में समेट दिया. सिर्फ एक दिन के लिए वे अमृतसर गए और वहां पार्टी कार्यकर्ताओं से मुलाकात कर वापस दिल्ली लौट गए. इन दिनों केजरीवाल दिल्ली के ग्रामीण इलाकों में घूम-घूमकर लोगों से मिल रहे हैं. अपने मंत्रियों और विधायकों से भी उन्होंने जनता के बीच रहने और जनता से मिलने के लिए कहा है. ये सभी काम इसलिए भी किए जा रहे हैं क्योंकि उन पर ये आरोप लग रहा था कि वे दिल्ली से ज्यादा देश के दूसरे राज्यों पर फोकस करते हैं. केजरीवाल जनता के इस पर्सेप्शन को झूठ साबित करना चाहते हैं. वे अब प्रधानमंत्री पर भी सीधे हमला करने से बच रहे हैं. एक तरह से कहें, तो इस मामले में वे साइलेंट मोड में हैं. हालांकि ईवीएम के मुद्दे को लेकर उनकी पार्टी चुनाव आयोग पर लगातार हमलावर है.

संगठनात्मक स्तर पर भी पार्टी बड़े बदलाव करने जा रही है. दिल्ली के नए प्रभारी गोपाल राय करीब डेढ़ लाख पार्टी पदाधिकारियों की नियुक्ति करने जा रहे हैं. ये नियुक्तियां बूथ लेवल तक की होंगी. बाकायदा इन लोगों को नियुक्ति पत्र देकर मंडल अध्यक्ष, बूथ प्रभारी, क्षेत्र प्रभारी आदि बनाया जाएगा. पहले इस तरह की नियुक्ति पार्टी ने नहीं की थी. सूत्रों के मुताबिक, ऐसे जमीनी कार्यकर्ता, जो पार्टी से रूठे हुए हैं या पार्टी छोड़ चुके हैं, उन्हें भी मनाने की कोशिश की जाएगी. यानि, कुल मिला कर देखें तो आम आदमी पार्टी अब दिल्ली पर ज्यादा फोकस करने के मूड में है. पार्टी पर्सेप्शन की उस लड़ाई में खुद को फिर से वापस लाना चाहती है, जिसमें वो काफी पिछड़ चुकी है. अब आम आदमी पार्टी इसमें सफल होती है या नहीं, ये तो आने वाले समय में पता चलेगा, लेकिन इसका संकेत अगले कुछ महीनों में मिल जाएगा. इंतजार कीजिए, ये देखने के लिए कि राष्ट्रपति चुनाव और गुजरात चुनाव को लेकर पार्टी का क्या रुख रहता है? ■

shashishekhar@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

वर्ष 09 अंक 15
12 जून- 18 जून 2017
RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.

संपादकीय	0120-6451999
	6450888
विज्ञापन व प्रसार	022-65500786
	+91-8451050786
	+91-9266627379
फैक्स न.	0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

आत्मसमर्पण
नक्सलियों का या सरकार का

राज्य सरकार ने अब तक 150 से भी अधिक नक्सलियों का आत्मसमर्पण कराया है. आत्मसमर्पण के समय सभी को मोटी राशि भी दी गई है. इन नक्सलियों को खुले जेल में रखा गया है, लेकिन अब तक किसी भी नक्सली के विरुद्ध राज्य सरकार आरोप तय नहीं कर सकी है. कुंदन पाहन को भी आत्मसमर्पण के समय राज्य सरकार ने पंद्रह लाख रुपए का चेक सौंपा. इस आत्मसमर्पण को भले ही नक्सलियों के खिलाफ सरकार की बड़ी सफलता के तौर पर देखा जा रहा है. लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि नक्सलियों को राजनीतिक दलों एवं इनके दिग्गज नेताओं का समर्थन मिलता रहा है. साथ ही आत्मसमर्पण करने वाले नक्सलियों पर अभियोजन पक्ष की ओर से कानूनी शिकंजा ढीला कर दिया जाता है. इन नक्सलियों को प्रोत्साहन राशि के रूप में मोटी रकम भी दी जाती है, जिससे कारण इनकी हिंसा के शिकार लोगों के परिजनों को लगता है कि उनके साथ न्याय की जगह अन्याय हुआ है.

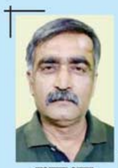

प्रशान्त शरण

दुर्दांत नक्सल कमांडर कुंदन पाहन ने जिस तरह से पुलिस द्वारा मिले सम्मान और रेड कार्पेट वेलकम के साथ आत्मसमर्पण किया, वो सवालों के घेरे में है. कुंदन पिछले कुछ माह से आला पुलिस अधिकारियों के सम्पर्क में था और उसने पुलिस अधिकारियों को बता दिया था कि वो अपनी शर्तों पर ही आत्मसमर्पण करेगा. पुलिस द्वारा शर्तों को मानने के बाद उसने हीरो की तरह आत्मसमर्पण किया. पुलिस के आला अधिकारी उसके साथ सेल्फी लेने को इतने बेचैन थे, मानो कुंदन पाकिस्तान का युद्ध फ़तह करने के बाद रांची लौटा हो. आत्मसमर्पण के समय पुलिस द्वारा कुंदन पाहन को हीरो की तरह पेश करने के मामले में हाईकोर्ट ने भी स्वत: संज्ञान लिया. कोर्ट ने कहा कि किसी नक्सली को इस तरह से हीरो बनाकर आत्मसमर्पण कराने से राज्य के युवाओं के बीच गलत संदेश जाएगा और वे दिग्भ्रमित होंगे. अब तो राज्य सरकार की आत्मसमर्पण नीति पर भी सवाल उठने लगे हैं. गौरतलब है कि कुंदन पाहन 128 से ज्यादा नक्सली हमलों को अंजाम दे चुका है. पूर्व मंत्री रमेश सिंह मुंडा, डीएसपी प्रमोद कुमार और इंस्पेक्टर फ्रांसिस इंदवार सहित दर्जनों पुलिसकर्मियों की हत्या का उस पर आरोप है. आईसीआईसीआई बैंक के कैश वैन से साढ़े पांच करोड़ रुपए और दो किलो सोने की लूट वाली घटना में भी उसकी संलिप्तता थी.

राज्य सरकार ने अब तक 150 से भी अधिक नक्सलियों का आत्मसमर्पण कराया है. आत्मसमर्पण के समय सभी को मोटी राशि भी दी गई है. इन नक्सलियों को खुले जेल में रखा गया है, लेकिन अब तक किसी भी नक्सली के विरुद्ध राज्य सरकार आरोप तय नहीं कर सकी है. कुंदन पाहन को भी आत्मसमर्पण के समय राज्य सरकार ने पंद्रह लाख रुपए का चेक सौंपा. इस आत्मसमर्पण को भले ही नक्सलियों के खिलाफ सरकार की बड़ी सफलता के तौर पर देखा जा रहा है. लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि नक्सलियों को राजनीतिक दलों एवं इनके दिग्गज नेताओं का समर्थन मिलता रहा है. साथ ही आत्मसमर्पण करने वाले नक्सलियों पर अभियोजन पक्ष की ओर से कानूनी शिकंजा ढीला कर दिया जाता है. इन नक्सलियों को प्रोत्साहन राशि के रूप में मोटी रकम भी दी जाती है, जिससे कारण इनकी हिंसा के शिकार लोगों के परिजनों को लगता है कि उनके साथ न्याय की जगह अन्याय हुआ है. कुंदन पाहन के आत्मसमर्पण के बाद स्व. रमेश सिंह मुंडा के पुत्र एवं तमाड़ से आजसू विधायक विकास मुंडा का अनशन और विरोध इसी भावना का प्रतिनिधित्व करता है. रमेश सिंह मुंडा की पत्नी ने भी विरोध के स्वर बुलंद करते हुए कहा कि राज्य सरकार ने पूर्व मंत्री मुंडा की हत्या के बाद एक लाख रुपए मुआवजा और एक नौकरी देने का आश्वासन दिया था, पर जिस नक्सली ने मुंडा की हत्या की, उसे स्वागत सत्कार के साथ पन्द्रह लाख रुपए का चेक दिया जा रहा है, जबकि उसे फांसी की सजा मिलनी चाहिए. इधर पुलिस इंस्पेक्टर फ्रांसिस इंदवार की विधवा पत्नी सुनीता इंदवार का कहना है कि कुंदन को महिमामंडित किए जाने से बुरा लग रहा है. कई पुलिसकर्मियों और निर्दोष ग्रामीणों की हत्या करने वाले को पुलिस अधिकारी गले लगा रहे हैं. सरकार इसे फांसी दे, तभी हमलोगों को न्याय मिलेगा. गौरतलब है कि कुंदन पाहन ने इंस्पेक्टर फ्रांसिस इंदवार की हत्या तालिबानी स्टाइल में कर दी थी और इंस्पेक्टर की गर्दन काटकर सिर हाइवे पर फेंक दिया था. इस घटना के बाद कुंदन की गिनती सबसे क्रूर नक्सली के रूप में होने लगी थी.

सवाल यह भी उठ रहा है कि सरेंडर पॉलिसी तो काफी समय से है, फिर अब इसे लेकर हंगामा क्यों हो रहा है. दरअसल, आत्मसमर्पण करने वाला नक्सली कुंदन पाहन आतंक का दूसरा नाम था. माओवादी संगठन में रहते हुए उसने कई वारदातों को अंजाम दिया. विधायक रमेश मुंडा और विशेष शाखा के इंस्पेक्टर फ्रांसिस इंदवार की क्रूर तरीके से हत्या की. डीएसपी प्रमोद कुमार समेत कई पुलिसकर्मियों की हत्या का आरोप कुंदन पाहन पर है. उस पर 128 गंभीर मामले विभिन्न थानों में दर्ज हैं. वह हमेशा एके 47 एवं 56 जैसे हथियारों से लैस रहता था. इसी तरह 15 लाख के ईनामी नक्सली नकुल यादव ने भी आत्मसमर्पण किया. नकुल पर 144 मामले विभिन्न थानों में दर्ज थे, नकुल पर भी न केवल कई जवानों की हत्या, बल्कि दस्ते में जबरन बच्चों को शामिल करने का भी आरोप है. इस साल 31 नक्सलियों ने आत्मसमर्पण किया है, लेकिन अभी तक किसी भी नक्सली के विरुद्ध राज्य सरकार ने मुकदमा शुरू नहीं किया है. नक्सलियों के आत्मसमर्पण से एक तबका आहत है और सरेंडर पॉलिसी पर सवाल उठा रहा है. लोगों का कहना है कि आखिर सरकार नक्सलियों को क्यों फूल-माला पहना रही है, उनका स्वागत कर रही है, हत्यारों के सामने पुलिस क्यों झुक रही है. यह चिंता की बात है कि जिस तरह से नक्सलियों को माफी दी जा रही है, उससे खतरा यह है कि आने वाली पीढ़ी कहीं भटक ना जाए. युवाओं को यह लगने लगा है कि नक्सली बनो, खून-खराबा करो और फिर सरेंडर कर सरकारी सुविधा का लाभ उठाओ.

अब सवाल उठता है कि राज्य सरकार नक्सलियों के सामने क्यों झुक रही है? जब नक्सल अभियान पर हर साल अरबों रुपये खर्च हो रहे हैं, सर्च ऑपरेशन चलता है, लंबी दूरी की गश्त होती है, तो फिर यह मजबूरी क्यों? या तो सरकार ने नक्सलियों के सामने घुटने टेक दिए हैं, या फिर उन्हें यह लगने लगा है कि नक्सलियों से लोहा लेना काफी मुश्किल है. जाहिर है कि फिर सरकार नक्सल ऑपरेशन में क्यों सरकारी धन खर्च करे. नक्सलियों को आतंक मचाने के लिए छोड़ दे, बाद में जब वे असमर्थ हो जाएं तो सरकार के सामने आत्मसमर्पण कर सरकारी सुविधा हासिल कर लें.

पूर्व मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी ने आत्मसमर्पण के तरीकों पर चिंता जाहिर करते हुए कहा है कि सरकार नक्सलियों को हीरो बना रही है. सरकार ने नक्सलियों के सामने घुटने टेक दिए हैं. नक्सलियों की समानान्तर सरकार चल रही है, इसकी फिक्र सरकार को नहीं है. वहीं, सरकार नक्सलियों की खुशामद करने में लगी है. जिसे फांसी की सजा मिलनी चाहिए, उसे सरकार और पुलिस गले लगा रही है. आजसू पार्टी ने भी सरकार के सरेंडर नीति और कुंदन पाहन को हीरो की तरह सरेंडर कराए जाने पर विरोध जताया. आजसू विधायक विकास मुंडा तो इसके खिलाफ अनशन पर बैठ गए और कुंदन को फांसी देने की मांग की. उन्होंने कहा कि हत्यारों को फूल और चेक देकर महिमामंडित किया जा रहा है.

राज्य सरकार के पुलिस प्रवक्ता एवं अपर पुलिस महानिदेशक आरके मल्लिक का मानना है कि ओड़ीशा और पश्चिम बंगाल में इससे ज्यादा उदार सरेंडर पॉलिसी है. उन्होंने कहा कि नक्सलियों को मुख्यधारा से जोड़ा जा रहा है. केन्द्र सरकार ने भी झारखंड की सरेंडर पॉलिसी को सराहा है और नक्सलियों के आत्मसमर्पण पर राज्य सरकार की सराहना की है. उन्होंने कहा कि अभी और कई नक्सली पुलिस के सम्पर्क में हैं और जल्द आत्मसमर्पण करेंगे. 2017 तक नक्सलवाद को पूरी तरह से समाप्त कर दिया जाएगा. इससे यह साफ जाहिर है कि सरकार नक्सलियों पर नकेल कसने की जगह आत्मसमर्पण कराकर राज्य से नक्सलवाद समाप्त कराना चाहती है.■

feedback@chauthiduniya.com

जेल से निकलने के बाद राजनीति में आऊंगा : कुंदन

नक्सल कमांडर कुंदन पाहन सरकार के मान-मनौव्वल और सत्कार से अतिउत्साहित है. ऐसी चर्चा है कि वह तमाड़ विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ सकता है. इस क्षेत्र में कुंदन पाहन की तूती बोलती है और सभी राजनीतिक दल इस मौके को लपकने के लिए तैयार हैं. कयास लगाया जा रहा है कि वह भारतीय जनता पार्टी का भावी उम्मीदवार हो सकता है. कुंदन पाहन का कहना है कि राजनीति में आकर वह समाजसेवा करना चाहता है. ये पूछे जाने पर कि जमानत पर रिहा होने के बाद आपकी भावी रणनीति क्या होगी, कुंदन पाहन ने कहा कि मुझे राजनीति में दिलचस्पी है. जेल से निकलने के बाद राजनीति में जाऊंगा, क्षेत्र एवं राज्य में विकास का काम करूंगा. जरूरत पड़ी तो चुनाव भी लड़ सकता हूं. हालांकि उनका कहना है कि अभी तक किसी पार्टी एवं राजनेता से इस पर कोई बातचीत नहीं हुई है. क्षेत्र में यह चर्चा जरूर होती है कि मैं इस नेता या पार्टी के लगातार सम्पर्क में हूं, पर यह कोरी बकवास है. मैंने अभी तक किसी भी राजनेता या पार्टी को चुनाव जिताने में मदद नहीं की. लेकिन अब मैं किसी पार्टी के साथ जुड़ना चाहता हूं. हालांकि किस पार्टी से जुड़ेंगे, के सवाल पर उसने चुप्पी साध ली. ऐसी चर्चा थी कि आत्मसमर्पण से पहले किसी पूर्व मुख्यमंत्री से उन्होंने राय मशविरा किया था. इस बात पर कुंदन ने स्पष्ट कहा कि किसी भी राजनेता, मंत्री या मुख्यमंत्री से मेरा कोई संबंध नहीं है.

नक्सली बनने के बारे में पूछे जाने पर उसने बताया कि भूमि विवाद के कारण नक्सल संगठन में आया. उसने बताया, मेरे परिवार के पास 2600 एकड़ जमीन थी. यह जमीन संयुक्त परिवार की थी, जिसमें से पांच सौ एकड़ जमीन पर जबरन कुछ लोगों ने कब्जा कर लिया था. बहुत समझाने के बाद भी जब उन्होंने जमीन नहीं छोड़ी, तब एक व्यक्ति की हत्या कर मैं फरार हो गया और इसके बाद नक्सल संगठन में शामिल हो गया.

पुलिस और नेताओं की क्रूरता से हत्या के बारे में पूछे जाने पर उसने कहा कि मैंने नहीं नेताओं और पुलिस को नक्सल मिलिट्री कमीशन ने मारा है, जिसमें सैकड़ों हथियारबंद नक्सली रहते थे. नक्सली संगठन के शीर्ष नेताओं से हमारी मुलाकात होती रहती थी. नेपाल के प्रधानमंत्री प्रचंड ने भी झुमरा पहाड़ पर हमारे साथ ट्रेनिंग ली थी. आत्मसमर्पण क्यों किया, ये पूछे जाने पर उसने बताया कि अब संगठन में पहले जैसी बात नहीं रही. सब अपने मन की करते हैं. 2014 में ही मैंने संगठन छोड़ दिया था और जंगलों में छिपकर रह रहा था. बाद में पुलिस के सामने आत्मसमर्पण करना ही उचित समझा.■

भाजपा सरकार ने उग्रवादी के समक्ष घुटने टेके : बाबूलाल

नक्सल कुंदन पाहन का सुपरहीरो की तरह आत्मसमर्पण करने का मामला विवादों में घिरता जा रहा है. राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री एवं झारखंड विकास मोर्चा के अध्यक्ष बाबूलाल मरांडी ने इस आत्मसमर्पण पर सवाल खड़ा करते हुए कहा कि दर्जनों लोगों की जान लेने वाले नक्सली ने आत्मसमर्पण

नहीं किया है, बल्कि सरकार ने उसके आगे घुटने टेका है. सरेंडर के दौरान वरीय पुलिस अधिकारी उससे इस तरह गले मिल रहे थे, जैसे कोई समधी मिलन हो रहा हो. बाबूलाल ने सरकार पर कई गंभीर आरोप लगाए. उन्होंने कहा कि वे उग्रवादियों के आत्मसमर्पण करने के खिलाफ नहीं हैं, लेकिन जिस तरह से इस नाटक को रचा गया, इससे सरकार पर ऊंगली उठना स्वाभाविक है. उन्होंने कहा कि सरकार हत्या करने वालों का सम्मान कर क्या साबित करना चाहती है. उन परिवार के लोगों से पूछिए, जिनकी उग्रवादियों ने हत्या की है. यह सरकार का अजीबोगरीब खेल है. उग्रवादियों को इस तरह सम्मान देने से युवाओं में गलत संदेश जा रहा है. युवाओं को यह अहसास होने लगा है कि आपराधिक दुनिया में प्रवेश कर बाद में सरकार के सामने आत्मसमर्पण कर वे खुशहाल जिंदगी जी सकते हैं. उन्होंने आत्मसमर्पण नीति की समीक्षा करने की मांग भी राज्य सरकार से की है.■

बीमा किसान का, फ़ायदा कंपनी का

कृषि विभाग के हवाले से छपी एक खबर के मुताबिक उत्तर प्रदेश के बरेली में वर्ष 2016 में खरीफ सीजन में 53,816 किसानों ने 43403 हेक्टेयर फसल का बीमा कराया. प्रीमियम की शक्ल में बीमा कंपनियों को पांच करोड़ से ज्यादा रुपए अदा किए, जबकि फसल बीमा का लाभ मात्र 1208 किसानों को मिला. मुआवज़े के रूप में केवल 32 लाख रुपए मिले. लिहाज़ा सरकार का यह दावा सच से काफी दूर है कि फसल बीमा की प्रक्रिया को आसान बना दिया गया है और अब किसान को न तो बीमा करवाने में परेशानी हो रही है और न ही मुआवजा हासिल करने में. कुछ ऐसा ही हाल छत्तीसगढ़ के रायगढ़ का है, जहां करीब 75 हज़ार किसानों ने फसल बीमा करवाया, लेकिन लाभ मिला केवल 48 किसानों को. यहां भी प्रीमियम के रूप में किसानों से 7 करोड़ 66 लाख रुपए वसूल किए गए थे. फसल बीमा के नाम पर इस तरह की धांधली के ख़िलाफ अब किसान भी लामबंद होने शुरू हो गए हैं.

शफ़ीक आलम

किसानों के लिए खेती आज न केवल घाटे का सौदा हो गई है, बल्कि पिछले कुछ दशकों से जानलेवा भी साबित हो रही है. फसल की बर्बादी और क़र्ज़ के बोझ तले दब कर किसानों के मरने का सिलसिला जारी है. इस बीच कई सरकारें आईं और गईं, लेकिन किसानों की आत्महत्या की कहानी वहीं की वहीं है. मौजूदा सरकार ने किसानों की आत्महत्या को अलग-अलग खानों में बांटकर समस्या की गंभीरता को कम करने की कोशिश की है, लेकिन वो इसमें असफल रही है. चाहे गुजरात हो या महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश हो या ओड़ीशा या फिर तमिलनाडु, हर जगह किसानों की आत्महत्या की कहानी एक जैसा ही है. इस कथानक में फसल की बर्बादी, लागत से कम कीमत का मिलना, क़र्ज़ का बोझ ही प्रमुख हैं. मौजूदा सरकार किसानों की बात खूब कर रही है. पिछली बजट में सरकार ने अपनी पीठ इसलिए थपथपाई कि पिछले कई दशकों के बाद कोई सरकार किसानों की बात कर रही है. इसी क्रम में 2016 में पहले से जारी राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एनएआईएस) और संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एमएनएआईएस) में कुछ नए प्रावधानों का इजाफा कर प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफवीवाई) शुरू की गई. इसका मकसद प्राकृतिक कारणों से फसल की बर्बादी के बाद पैदा होने वाले तनाव से किसानों को निजात दिलाना था. लेकिन अभी तक की रिपोर्टों के मुताबिक यह योजना किसानों का तनाव कम करने के बजाय इज़ाफा ही कर रही है. साथ ही विपक्ष के इस दावे को भी मजबूती दे रही है कि यह योजना किसानों को कम बीमा कंपनियों को अधिक लाभ पहुंचा रही है.

कृषि मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक पैनल में शामिल 11 बीमा कंपनियों ने पीएमएफवीवाई के तहत वर्ष 2016-17 में खरीफ और रबी फसलों के लिए लगभग 15891 करोड़ रुपए प्रीमियम की पॉलिसी बेची है. इस प्रीमियम की राशि में किसानों की भागीदारी 2685 करोड़ रुपए है, जबकि बाक़ी की राशि केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा वहन किया गया है. मंत्रालय द्वारा यह भी दावा किया गया है कि वर्ष 2016-17 में बीमा क्लेम की राशि 13000 करोड़ रुपए हो सकती है, जो किसानों से इकट्ठा की गई प्रीमियम से 80 प्रतिशत अधिक है. वहीं विपक्ष का आरोप है कि सरकार प्रधानमंत्री बीमा योजना के सहारे प्राइवेट कंपनियों को फायदा पहुंचाना चाहती है. कांग्रेस का दावा है कि वर्ष 2016 में खरीफ फसल के लिए बीमा कंपनियों को 17185 करोड़ रुपए अदा किए गए और बदले में कुल 3.9 करोड़ किसानों को 6808 करोड़ रुपए की राहत मिली यानि बीमा कंपनियों ने कुल 10000 करोड़ रुपए का लाभ अर्जित किया. उसी तरह सभी विपक्षी पार्टियों के अपने-अपने दावे हैं, लेकिन इस सच को सभी बीमा कंपनियां भी कबूल कर रही हैं कि कृषि बीमा की वजह से उनके प्रीमियम कलेक्शन में वृद्धि हुई है. यह भी सच है कि किसानों के जिस तरह के लाभ की बात सरकार कर रही थी, वैसा लाभ किसानों को नहीं मिल रहा है. जिन किसानों ने अपनी फसलों का बीमा करा रखा है, उन्हें नष्ट फसल का बीमा हासिल करने में पसीने छूट रहे हैं. ये कहानी एक केवल एक राज्य तक ही सीमित नहीं है. अखबारों की रिपोर्टों की मानें तो मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश हर जगह से बीमा क्लेम में धांधली की रिपोर्टें छप रही हैं.

प्रधानमंत्री फ़सल बीमा योजना की मुख्य बातें

- इस योजना के तहत रबी, खरीफ, वाणिज्यिक फसलों और बागवानी का बीमा हो सकता है.
- खरीफ की फसल के लिए 2 प्रतिशत प्रीमियम का होगा.
- रबी की फसल के लिए 1.5 प्रतिशत प्रीमियम लिया जाएगा.
- वार्षिक वाणिज्यिक फसलों और बागवानी के लिए 5 प्रतिशत प्रीमियम का भुगतान करना होगा.
- सरकारी सब्सिडी पर कोई ऊपरी सीमा नहीं होगी.
- पीएमएफवीवाई की प्रीमियम दर पूर्व की दोनों योजनाओं से बहुत कम है.
- 2017-18 के आम बजट में केंद्र सरकार ने पीएमएफवीवाई के तहत होने वाली खर्च की राशि को बढ़ा कर 13240 करोड़ रुपए कर दिया है.
- फसल में आग लगना, चोरी होना आदि को इस योजना के अन्तर्गत शामिल नहीं किया गया है.

कृषि विभाग के हवाले से छपी एक खबर के मुताबिक उत्तर प्रदेश के बरेली में वर्ष 2016 में खरीफ सीजन में 53,816 किसानों ने 43403 हेक्टेयर फसल का बीमा कराया. प्रीमियम की शक्ल में बीमा कंपनियों को पांच करोड़ से ज्यादा रुपए अदा किए, जबकि फसल बीमा का लाभ मात्र 1208 किसानों को मिला. मुआवज़े के रूप में केवल 32 लाख रुपए मिले. लिहाज़ा सरकार का यह दावा सच से काफी दूर

है कि फसल बीमा की प्रक्रिया को आसान बना दिया गया है और अब किसान को न तो बीमा करवाने में परेशानी हो रही है और न ही मुआवजा हासिल करने में. कुछ ऐसा ही हाल छत्तीसगढ़ के रायगढ़ का है, जहां करीब 75 हज़ार किसानों ने फसल बीमा करवाया, लेकिन लाभ मिला केवल 48 किसानों को. यहां भी प्रीमियम के रूप में किसानों से 7 करोड़ 66 लाख रुपए वसूल किए गए थे. फसल बीमा के नाम पर इस तरह की धांधली के खिलाफ अब किसान भी लामबंद होने शुरू हो गए हैं. कई जिलों से बीमा करवाने वाले किसानों की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है. दरअसल इसमें एक सबसे बड़ी खामी यह है कि अधिकतर किसानों को यह मालूम ही नहीं है कि यह योजना है क्या? इस में क्षति का अंदाज़ा कैसे लगाया जाता है? ये शिकायत मिल रही है कि बीमा पॉलिसी पर किसान का हस्ताक्षर नहीं लिया जाता. स्थानीय आपदा की स्थिति में अधिकारी नुकसान का जायजा लेने जल्द नहीं पहुंचते. इसका नतीजा यह होता है कि किसान को इस दफ्तर से उस दफ्तर का चक्कर लगाना पड़ता है और हाथ कुछ भी नहीं लगता. देश में बंटाई पर खेत जोतने वाले किसानों की बड़ी संख्या मौजूद है. ऐसे किसानों के लिए बीमा का प्रावधान नहीं है.

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपने चुनावी भाषणों में किसानों को उनकी मेहनत और लागत के हिसाब से फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित करने का आश्वासन दिया था. पिछले साल उन्होंने एक और आश्वासन दिया था कि वे 2022 तक किसानों की आमदनी दोगुनी कर देंगे. 2022 तो अभी दूर है लेकिन किसानों की मेहनत और लागत के हिसाब से उन्होंने अभी तक न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित नहीं किया है. महाराष्ट्र के किसान अपनी लागत और पैदावार की कीमत को लेकर आन्दोलन की तैयारी कर रहे हैं. तमिलनाडु के किसान दिल्ली में प्रदर्शन कर जा चुके हैं. किसानों की आत्महत्या का सिलसिला अभी थमा नहीं है. सरकार की फ्लैगशिप बीमा योजना से सम्बंधित जो आंकड़े मिल रहे हैं उसके मुताबिक विपक्षी पार्टियों का दावा सही लग रहा है कि यह योजना बीमा कंपनियों के लिए तैयार की गई है. ज़ाहिर है किसानों की आमदनी दोगुनी करने में फसल बीमा की एक बड़ी भूमिका हो सकती है, लेकिन ज़रूरत इस बात की है कि इसकी त्रुटियों को जल्द से जल्द दूर कर लिया जाए और किसानों की असल समस्या को समझा जाए. नहीं तो इसका यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सरकार निजी कंपनियों को फायदा पहुंचाने के लिए किसानों का सहारा ले रही है. ■

feedback@chauthiduniya.com

बडवानी, मध्य प्रदेश

सरदार सरोवर के हज़ारों विस्थापितों ने भरी हुंकार

बिना पुनर्वास नहीं छोड़ेंगे गांव

चौथी दुनिया ब्यूरो

सरदार सरोवर बांध की ऊंचाई बढ़ाने को लेकर सुप्रीम कोर्ट के आदेश ने हजारों परिवारों की नींद उड़ा दी है. कोर्ट के आदेश के पालन के लिए सरकारी अधिकारियों की तरफ से लोगों पर विस्थापन का दबाव बनाया जा रहा है. लेकिन विस्थापित परिवार, जो अब तक अपनी जमीन पर डटे हुए हैं, बिना मुआवजे और व्यवस्थित पुनर्वास के गांव छोड़ने को तैयार नहीं हैं. इससे प्रभावित सभी लोग आंदोलनों और प्रदर्शनों के माध्यम से विरोध जता रहे हैं. मध्य प्रदेश के बडवानी में भी लोगों ने इसके खिलाफ आंदोलन शुरू कर दिया है.

बडवानी के झंडा चौक में नर्मदा किनारे के बाशिंदों ने डेरा डाल दिया है. हजारों महिलाओं के साथ आए करीब 5000 किसान, मजदूर, कारीगर, मछुआरों ने 25 मई को 3 कि.मी. लम्बी बैलगाड़ी रैली निकालकर विरोध प्रदर्शन किया था. किसान, मजदूर, केवट-कहार, कुम्हार आदि सभी ने अपनी-अपनी बैलगाड़ियों से बडवानी के सभी रास्ते पाट दिए थे. कृषि मंडी से निकली बैलगाड़ी रैली महात्मा गांधी मार्ग से होते हुए झंडा चौक पहुंचकर आमसभा में परिवर्तित हो गई. कई किसान-मजदूर नेताओं ने बैलगाड़ियों पर बनाए गए मंच से इस रैली को संबांधित किया. कमला यादव, वाहिद भाई, भागीरथ धनगर, पेमल बहन, श्यामा मछुआरा, सनोबर बी मंसूरी आदि ने सरकार की मंशा पर सवाल उठाया और कहा कि सरकार विस्थापितों के सात सौतेला व्यवहार कर रही है. विकास के लिए त्याग करने को कहकर सरकार हमें पुलिसबल के सहारे विस्थापित नहीं कर सकती. हम अपने पीढ़ियों पुराने गांव, खेत, मंदिर-मस्जिद को बर्बाद होते नहीं देख सकते. ग्राम पिछोड़ी की श्यामा बहन ने कहा कि सरकार पुनर्वास नहीं भ्रष्टाचार करना जानती है. वो अत्याचार और अन्याय पर तुली हुई है. मछुआरों के हाथ से मछली और नदियों के जलाशय हम छीनने नहीं देंगे. मुख्यमंत्री केवल घोषणावीर हैं. मछुआरों को वादे नहीं मछली पर अधिकार चाहिए.

इस आंदोलन की मुख्य नेता मेधा पाटकर ने कहा कि सरकार द्वारा सर्वोच्च अदालत के सामने प्रस्तुत किए गए सभी शपथ पत्र झूठे साबित हुए हैं. यदि सरकार हमारी आजादी के इस आंदोलन में भी शहादत लेना चाहती है, तो ले ले, हम तैयार हैं. भोपाल में मुख्यमंत्री द्वारा मात्र भाजपा-आरएसएस के नुमाइंदों को बुलाकर 10 मिनट की तथाकथित पंचायत को मेधा पाटकर ने जनतंत्र विरोधी करार दिया. सरकार की तरफ से हजारों परिवारों को 40,000 रुपए किराया और 20,000 रुपए भोजन खर्च देने की घोषणा को उन्होंने हास्यास्पद बताया. उन्होंने कहा कि भूमिहीन प्रभावितों का जीवन और जीविका बुरी तरह प्रभावित होगी, ऐसे हर प्रभावित परिवार को 15 लाख दिया जाना चाहिए.

लोगों का कहना है कि सर्वोच्च न्यायालय के 8 फरवरी के फैसले में पुनर्वास के बाद ही विस्थापन का आदेश है. सरकार सही अर्थों में सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों का पालन नहीं कर रही है. न्यायालय के आदेश का पालन तब होता, जब पहले महिला खाताधारकों, सह खाताधारकों और अवयस्क खाताधारकों को उनकी पात्रता के 60- 60 लाख रुपए के अनुदान का भुगतान किया जाता. सरकार के द्वारा अलग-अलग स्तरों पर प्रभावितों की अलग-अलग संख्या बताने को लेकर भी लोगों में आक्रोश है. सर्वोच्च अदालत में सरकार द्वारा पेश किए गए आंकड़ों के अनुसार 138.68 मीटर बैक वॉटर लेवल कम करने के बावजूद धार जिले के कुक्षी तहसील के 8177, मनावर के 2601, धरमपुरी के 358 और खरगोन के 30 परिवार प्रभावित होने वाले हैं. जबकि धार कलेक्टर ने कहा है कि बांध की ऊचाई बढ़ाने से 6132 परिवार प्रभावित होंगे, वहीं बडवानी कलेक्टर ने अपने जिले में 10000 परिवारों के प्रभावित होने की बात कही है. राज्य के मुख्य सचिव ने तो प्रभावितों की पूरी संख्या को 9000 तक समेट दिया है.

इससे पहले 21 मई को भी लोगों ने मशाल जुलूस निकालकर विरोध-प्रदर्शन किया. बडवानी तहसील के बगूद, छोटा बड़दा, पिपरी, मनावर तहसील के एकलबारा, सेमल्दा और कुक्षी तहसील के कड़माल, खापरखेड़ा, बाजरीखेड़ा और गेहलगांव में लोगों ने मशाल जुलूस निकालकर सरकार के प्रति विरोध प्रदर्शित किया. ग्रामिणों के विरोध को स्थानीय जन प्रतिनिधियों का भी साथ मिल रहा है. कुक्षी (जिला) विधायक सुरेन्द्र सिंह हनी बघेलजी और बडवानी के विधायक रमेश पटेल ने सभा में आकर लोगों को अपना समर्थन दिया. सुरेन्द्र सिंह हनी बघेलजी ने कहा कि ये सरकार किसान विरोधी है. पिछले 13 सालों में मुख्यमंत्री ने एक बार भी किसानों से बातचीत नहीं की. हजारों हजार परिवारों का विनाश करने वाली इस योजना को रोकना ही आज की स्थिति में न्याय होगा. वहीं, बडवानी के भूतपूर्व नगर अध्यक्ष राजेन्द्र मंडलोई ने कहा कि हम हर हाल में किसानों के इस आंदोलन के साथ हैं.

लोगों के व्यापक विरोध को देखते हुए धार कलेक्टर ने पिछले दिनों कुछ गांवों का दौरा किया. निसरपुर के बड़े गांव में करीब 2000 लोगों से रुबरु हुए कलेक्टर ने जैसे ही कहा कि 31 जुलाई 2017 तक हमें कैसे भी गांव खाली कराने होंगे, लोगों का आक्रोश उबल पड़ा. लोगों ने जोर देकर कहा कि बिना पूरी तरह से पुनर्वास के हम अपनी जमीन नहीं छोड़ सकते. अब तक पुनर्वास का आधा काम भी नहीं हुआ है. स्थानीय प्रतिनिधि प्रदीप पाटीदार ने कहा कि बचे हुए दो महीने में पुनर्वास स्थल तैयार नहीं हो सकते हैं. इसलिए हम किसी भी कीमत पर अपनी जमीन नहीं छोड़ सकते. ■

feedback@chauthiduniya.com

अजेय हथियार की तलाश में लालू

लालू प्रसाद राष्ट्रीय स्तर पर महागठबंधन बनाने के लिए 27 अगस्त को पटना में एक बड़ी रैली का ऐलान कर चुके हैं. वे इन दिनों पूरी पार्टी को इस रैली की तैयारी में झोंक चुके हैं. इस रैली के माध्यम से वे सूबे में अपनी राजनीतिक ताकत के प्रदर्शन की हसरत तो रखते ही हैं, साथ ही यह भी चाहते हैं कि नरेंद्र मोदी को आगामी लोकसभा चुनाव में पटकनी देने की कवायद में वे केंद्रीय भूमिका निभाएं.

सरोज सिंह

घोटालों के आरोपों से घिरे लालू प्रसाद इन दिनों राजनीतिक तौर पर काफी सक्रिय हैं. हालांकि लालू की राजनीति को करीब से जानने वाले लोगों के लिए यह कोई नई बात नहीं है. लालू के विरोधी जितनी ताकत से उन पर प्रहार करते हैं, लालू भी उन पर दोगुनी ताकत से हमला करते हैं. इन दिनों सुशील मोदी रोजाना लालू और उनके परिवार के सदस्यों पर घपले और घोटाले का आरोप लगा रहे हैं. इन आरोपों की जद में लालू, राबड़ी देवी, उनके दोनों मंत्री पुत्र तेजप्रताप यादव और तेजस्वी यादव भी आ चुके हैं. बेटी और सांसद मीसा भारती और दामाद शैलेश भी चपेटे में हैं. मीसा और शैलेश से आयकर विभाग पूछताछ कर रही है और अब ये दोनों ईडी के निशाने पर हैं. चारा घोटाले के देवघर से जुड़े मामले में लालू प्रसाद को भी अदालत में पेश होना है. लालू परिवार के प्रस्तावित सबसे बड़े मॉल का निर्माण अधर में लटक गया है. नीतीश कुमार को लेकर भी लालू प्रसाद इस समय बहुत ज्यादा आश्वस्त नजर नहीं आ रहे हैं. लालू प्रसाद भले ही सार्वजनिक तौर पर कह रहे हैं कि नीतीश की तरफ जो डोरा डालता है, हम उस डोरे को ही काट देते हैं लेकिन सवाल यह है कि जब नीतीश ही डोरे के नजदीक जाने लगेंगे तो फिर लालू प्रसाद क्या करेंगे? लालू परिवार पर लग रहे घोटालों के आरोप पर नीतीश कुमार और न ही उनकी पार्टी कुछ बचाव कर पा रही है. नीतीश कुमार सोनिया गांधी के बुलावे पर नहीं गए और अगले ही दिन नरेंद्र मोदी के साथ भोज में शामिल हुए. राजनीतिक जानकार बताते हैं कि यह बहुत ही ठोस संदेश है कि नीतीश कुमार आने वाले दिनों में कोई बड़ा फैसला ले सकते हैं. लालू खेमे को लगता है कि नीतीश कुमार अपने सभी विकल्प खुले रखना चाहते हैं और जब जिस तरह के हालात बनेंगे उस हिसाब से फैसला ले सकते हैं. जानकार बताते हैं कि लालू प्रसाद को यह आभास है कि आने वाले दिन उनके लिए काफी कठिन होने वाले हैं. अगर दोनों बेटों पर लगे आरोपों की कड़ी आगे बढ़ी तो चार्जशीट की भी नौबत आ सकती है. सुप्रीम कोर्ट ने नौ महीने में चारा घोटाले से जुड़े सभी मामलों को निपटाने के लिए कहा है. अगर चारे में बात बिगड़ी तो लालू प्रसाद को फिर जमानत के लिए जद्दोजहद करनी पड़ सकती है. इसलिए इस दौर में लालू प्रसाद राजनीतिक तौर पर खुद को इतना मजबूत कर लेना चाहते हैं कि अगर कुछ बुरा भी हो तो कम से कम 2019 की लड़ाई में वे एक मजबूत ताकत बन कर उभर सकें.

लालू प्रसाद राष्ट्रीय स्तर पर महागठबंधन बनाने के लिए 27 अगस्त को पटना में एक बड़ी रैली का ऐलान कर चुके हैं. वे इन दिनों पूरी पार्टी को इस रैली की तैयारी में झोंक चुके हैं. इस रैली के माध्यम से वे सूबे में अपनी राजनीतिक ताकत के प्रदर्शन की हसरत तो रखते ही हैं, साथ ही यह भी चाहते हैं कि नरेंद्र मोदी को आगामी लोकसभा चुनाव में पटकनी देने की कवायद में वे केंद्रीय भूमिका निभाएं. इसलिए इस रैली में अखिलेश यादव के साथ मायावती को भी न्योता दिया गया है. उनका पूरा प्रयास है कि अखिलेश और मायावती दोनों मिलकर यूपी का लोकसभा चुनाव लड़ें. मायावती को बिहार से राज्यसभा भेजने की बात भी कही जा रही है. इससे लालू प्रसाद के दो हित एक साथ सधने वाले हैं. पहली बात तो यह होगी कि यूपी में विधानसभा चुनाव में जिस तरह वोटों का बंटवारा हुआ, वह रुक जाएगा. अगर अखिलेश, मायावती और कांग्रेस तीनों मिलकर यूपी में 2019 में उतरेंगे तो भाजपा को कड़ी चुनौती मिल सकती है. इसके इतर मायावती के बहाने लालू प्रसाद राजद से छिटके दलित वोटों को भी अपने पाले में कर सकते हैं. अब माय समीकरण को विस्तार देते हुए लालू प्रसाद अपना जनाधार इतना मजबूत कर लेना चाहते हैं कि विपरीत राजनीतिक हालात में भी उनका परचम लहराता रहे. जानकार बताते हैं कि लालू प्रसाद की नजर इस समय दलित व कुशवाहा वोटबैंक पर है. सियासी जानकारों का मानना है कि अगर लालू प्रसाद को मायावती का खुला समर्थन मिल जाता है तो दलित वोटों को राजद के पाले में लाने में काफी आसानी होगी. लालू प्रसाद अगर मायावती को राजद कोटे से राज्यसभा भेजते हैं तो इससे दलितों में बहुत सकारात्मक संदेश जाएगा. बताते चलें कि इस समय दलितों के वोट पर सभी पार्टियों की नजर है. इस वोट बैंक पर भाजपा भी कड़ा होमवर्क कर रही है और इसका फायदा भी चुनावों में उसे मिला है. नीतीश कुमार भी इस वोटबैंक में सेंधमारी कर चुके हैं. लालू प्रसाद चाहते हैं कि मायावती को आगे रखकर इस वोटबैंक का पूरा नहीं, तो कम से कम एक बड़ा हिस्सा अपने पाले में कर लें. बताया जाता है कि मायावती ने लालू प्रसाद की रैली में भाग लेने पर अपनी सहमति दे दी है. वहीं, कुशवाहा समाज के कई बड़े नेता भी लालू के संपर्क में हैं. इनमें कुछ नेताओं को सीधे राजद में लेने में पार्टी के अंदर परेशानी है, इसलिए रास्ता खोजा जा रहा है कि सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे.

जानकार बताते हैं कि राजनीतिक संभावनाओं को खुला रखते हुए उपेंद्र कुशवाहा की पार्टी से संपर्क साधा जा रहा है. दोनों ही पार्टी के कई नेता एक दूसरे के संपर्क में हैं. उपेंद्र कुशवाहा ने भी लालू पर लग रहे आरोपों पर कुछ खास टीका-टिप्पणी नहीं की है. नीतीश की तरह उपेंद्र कुशवाहा ने भी अंदरखाने अपने सारे विकल्प खुले रखे हैं. 2019 की लड़ाई को देखते हुए पार्टियां वेट एंड वाच की नीति पर अमल कर रही हैं. इस बीच सूत्र बताते हैं कि कुशवाहा समाज के कई बड़े नेता जल्द उपेंद्र कुशवाहा की पार्टी में शामिल होने वाले हैं. इनमें नागमणि और भगवान सिंह कुशवाहा का भी नाम लिया जा रहा है. कहा जाए तो कुशवाहा समाज की गोलबंदी करने में उपेंद्र कुशवाहा लगे हैं. अगर यह सफल होती है तो यह लालू के लिए सकून वाली घटना होगी. कहा जाए तो लालू प्रसाद अपने माय यानि मुसलमान और यादव समीकरण में अब दलित और कुशवाहा को जोड़ने में लगे हैं. एक ऐसा वोट बैंक का हथियार जो हर राजनीतिक लड़ाई में अजेय हो. सूत्रों पर भरोसा करें तो लालू प्रसाद इस सियासी हथियार को पाने के काफी करीब पहुंच चुके हैं और इंतजार केवल सही समय का हो रहा है. नरेंद्र मोदी के खिलाफ उनके हुंकार की ताकत इसी हथियार से निकल रही है. लालू को जानने वाले बताते हैं कि वे अंतिम समय तक उम्मीद नहीं छोड़ते हैं और इस बार तो लड़ाई आर-पार की है. हालांकि अभी सब कुछ परदे के पीछे है, लेकिन जब परदा उठेगा तब बिहार के सियासी संग्राम की एक अलग तस्वीर देखने को मिलेगी. ■

feedback@chauthiduniya.com

छत्तीसगढ़ में अब चलेगी गढ़ की सियासत

रूपेश गुप्ता

मध्यप्रदेश में सत्ता खोने के बाद दिग्गी राजा की जनता और कांग्रेस संगठन पर पकड़ कमज़ोर हुई है, लेकिन छत्तीसगढ़ के हालात दूसरे हैं. यहां के राजनीतिक माहौल में स्थानीय नेता शिद्दत से दिग्विजय सिंह की जरूरत महसूस कर रहे हैं. इसकी बानगी 25 मई को देखने को मिली, जब कांग्रेस के नेता सुभाष धुप्पड़ ने कहा, राजन हमें अपनी शरण में ले लो!

यह बात किसी से छिपी नहीं है कि माइनस जोगी राज्य के जितने भी कांग्रेस के प्रमुख नेता पार्टी में हैं, वे सभी दिग्विजय सिंह के आदमी हैं. प्रदेश अध्यक्ष हों या फिर नेता प्रतिपक्ष, छत्तीसगढ़ में दोनों पदों के लिए आज भी उनकी ही मर्ज़ी चलती है. इसी बात से खिन्न होकर पिछले विधानसभा चुनाव से पहले जब दिग्विजय सिंह प्रदेश कांग्रेस के कार्यक्रम में आए थे, तब जोगी ने कह दिया था कि राज्य में छत्तीसगढ़ियों की राजनीति चलेगी, किसी गढ़ वाले की नहीं. उनका इशारा दिग्विजय सिंह की ओर था, क्योंकि वो जानते थे कि रायपुर के लिए सियासी पत्ते भोपाल और दिल्ली में बैठकर दिग्विजय सिंह ही फेंटा करते हैं.

हालांकि अजीत जोगी ने मुख्यमंत्री रहते दिग्विजय सिंह की छाया से भी पार्टी को दूर रखा. लेकिन जब जोगी का राज खत्म हुआ, तो एक एक कर सारे नेता फिर से दिग्गी राजा के साथ हो लिए. एक जमाने में जो लोग विद्याचरण सिंह या श्यामाचरण सिंह के खेमे के थे, वे भी अपने नेता का प्रभाव कम होने के बाद दिग्गी कैंप के आदमी बन गए.

शायद इसीलिए 26 मई को नंदकुमार पटेल के बेटे उमेश पटेल को अपने पिता की प्रतिमा का अनावरण करना था, तब उन्हें दिग्विजय सिंह ही याद आए. 25 जून 2016 को जब दिग्विजय सिंह खरसिया गए, तब छत्तीसगढ़ का ऐसा कोई बड़ा नेता नहीं होगा, जो उनका साथ पाने की हसरत लिए खरसिया नहीं गया. इसलिए जब एयरपोर्ट पर महंत खेमे के विश्वसनीय सुभाष धुप्पड़ दिग्विजय सिंह से कहते हैं -'हे राजन! हमें संरक्षण दो'- तो इसकी बहुत सारी वजहें नज़र आती हैं. ऐसे में राजनीति के इस चाल को समझना जरूरी है.

दरअसल, राज्य में कांग्रेस इस समय कई तरह के संकट के दौर से गुजर रही है. कांग्रेस के लिए यहां सबसे बड़ा संकट लंबे समय तक सत्ता से दूर रहना है. 13 साल बाद भी पार्टी में कोई ऐसा नेता नहीं है, जो रमन सिंह की शख्सियत को चुनौती दे सके और जिसे बलरामपुर से कोंटा तक जनता पहचानती हो. चाहे चरणदास महंत हों, सत्यनारायण शर्मा, धनेंद्र साहू, भूपेश बघेल या टीएस सिंहदेव, सब अपने-अपने क्षेत्र के नेता हैं, जबकि रमन सिंह को प्रदेश का बच्चा-बच्चा जानता है.

कांग्रेस पार्टी के अंदरखाने बड़े नेताओं के बीच मतभेद की खबरें भी अब किसी से छिपी नहीं हैं. जोगी विरोध के चलते सभी नेता एकजुट हो गए थे. लेकिन जोगी के पार्टी से जाते ही सब फिर गुटों में बंट गए. सभी नेता एक-दूसरे की शिकायतें लगातार आलाकमान तक पहुंचा रहे हैं. इस हालात में कोई ऐसा नेता नहीं दिखता, जिसकी स्वीकार्यता सभी गुटों में हो. अजीत जोगी द्वारा नई पार्टी बनाए जाने के बाद हालात और बिगड़ने की आशंका कार्यकर्ताओं को सता रही है. इसका असर कार्यकर्ताओं के मनोबल पर भी पड़ रहा है.

जब राज्य में पार्टी नेताओं के बीच आपसी खींचतान मची हो, मुकाबला और कड़ा होने वाला हो, समीकरण पार्टी के हित में न हों, तब प्रभारी महासचिव बीके हरिप्रसाद की भूमिका बढ़ जाती है. हरिप्रसाद कड़े तेवर वाले नेता हैं. पिछले चुनाव तक उनकी सक्रियता ऐसी थी कि कार्यकर्ता उनके कड़े तेवर सहकर भी पूरी ऊर्जा के साथ जुड़े रहते थे. 2013 के विधानसभा चुनाव से पहले हरिप्रसाद हर हफ्ते छत्तीसगढ़ आते थे. लेकिन यहां चुनाव क्या हारे, राज्य में उनके दर्शन ही दुर्लभ हो गए. वे खुद प्रभारी के पद से हटने की इच्छा जता चुके हैं और इस्तीफा भी दे चुके हैं.

माना जा रहा है कि नए विकल्प के सामने नहीं आने तक उन्हें काम संभालना पड़ सकता है. कांग्रेस के राष्ट्रीय संगठन में बदलाव का इंतज़ार पूरी पार्टी को है. संकट यह है कि बदलाव के बाद अगर महासचिव पद का दायित्व किसी नए नेता को दिया जाता है तो उसे काम शून्य से करना होगा. जाहिर है महासचिव पद के लिए राज्य कांग्रेस को ऐसे नेता की जरूरत है तो पहले से नेताओं से वाकिफ हो और जो कम समय में पार्टी को एकजुट रखने के साथ कार्यकर्ताओं में ताकत भर सके.

इन तमाम ज़रूरतों को पूरा करने में दिग्विजय सिंह सबसे फिट बैठते हैं. हालांकि कई नेता और कार्यकर्ता मानते हैं कि इस बात की संभावना नहीं के बराबर है, क्योंकि छत्तीसगढ़ के साथ मध्यप्रदेश के चुनाव हैं. लिहाज़ा उन्हें अपने राज्य को देखना है. वहां प्रत्याशी चयन से लेकर प्रचार तक की अहम जिम्मेदारी दिग्विजय सिंह के कंधों पर होगी. इसके अलावा, इस बात की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है कि दिग्विजय सिंह फिर से महासचिव न बना दिए जाएं. हालांकि दिग्विजय सिंह ने रायपुर में साफ कह दिया है कि वे छत्तीसगढ़ के महासचिव बनने के इच्छुक नहीं हैं. उसकी बड़ी वजह यह है कि एक बड़े राज्य के दो बार मुख्यमंत्री और राष्ट्रीय कांग्रेस के रणनीतिकार अपने को एक छोटे से राज्य तक क्यों सीमित रखना चाहेंगे.

> राज्य में कांग्रेस इस समय कई तरह के संकट के दौर से गुजर रही है. कांग्रेस के लिए यहां सबसे बड़ा संकट लंबे समय तक सत्ता से दूर रहना है. 13 साल बाद भी पार्टी में कोई ऐसा नेता नहीं है, जो रमन सिंह की शख्सियत को चुनौती दे सके और जिसे बलरामपुर से कोंटा तक जनता पहचानती हो. चाहे चरणदास महंत हों, सत्यनारायण शर्मा, धनेंद्र साहू, भूपेश बघेल या टीएस सिंहदेव, सब अपने-अपने क्षेत्र के नेता हैं, जबकि रमन सिंह को प्रदेश का बच्चा-बच्चा जानता है.

रायपुर -भोपाल से लेकर दिल्ली तक कांग्रेस के भीतर के जो समीकरण बनते दिख रहे हैं, उसमें दिग्विजय सिंह की संभावना को खारिज नहीं किया जा सकता है. मध्यप्रदेश में यह बात तय हो चुकी है कि यहां उनकी भूमिका अब सीमित रहेगी. राज्य की कमान कभी भी कमलनाथ या ज्योतिरादित्य सिंधिया को मिल सकती है. दोनों में से कमान किसी भी नेता को मिले, कोई भी नहीं चाहेगा कि जब कमान उनके हाथ में हो तो वहां दिग्विजय का कोई दखल हो.

छत्तीसगढ़ के लिए कार्यकर्ता कोई ऐसा महासचिव चाहते हैं जो कार्यकर्ताओं को पहचानता हो. कुछ कार्यकर्ता चाहते हैं कि भक्त चरणदास को प्रमोट कर प्रभारी महासचिव बनाया जाए, तो कुछ मुकुल वासनिक से प्रभावित दिखते हैं. यहां के एक बड़े नेता किसी युवा चेहरे को महासचिव बनाने के हक़ में हैं, ताकि टिकट बंटवारे में उन्हें ज्यादा दिक्कत न हो.

जानकार मानते हैं कि दिग्विजय सिंह के महासचिव बनाने भर से पार्टी मुकाबले में आ जाएगी. पार्टी के एक वरिष्ठ नेता का कहना है कि छत्तीसगढ़ में दिग्विजय सिंह से बाहर कुछ नहीं है. सभी नेता उनके बनाए हैं. चरणदास महंत, भूपेश बघेल, टीएस सिंहदेव, सत्यनारायण शर्मा, धनेंद्र साहू सब दिग्विजय कैंप के हैं. दिग्गी राजा के रहते सारी गुटबाज़ी खत्म हो जाएगी. इसकी बानगी अक्सर उनके छत्तीसगढ़ दौरे पर दिखती है, जब वे आते हैं, तब गुटों में बंटी कांग्रेस एक साथ खड़ी दिखती है. यहां यह भी याद रखना होगा कि मध्यप्रदेश में दिग्विजय सिंह दूसरी बार छत्तीसगढ़ की वजह से ही जीते थे. उन्हें ये बखूबी मालूम है कि यहां किसे क्या काम सौंपना है.

जिन दो मामलों में राज्य की कांग्रेस कमज़ोर दिखती है दिग्विजय सिंह उसे भी दुरुस्त कर सकते हैं. राज्य के नौकरशाह मध्यप्रदेश से आए हैं. वरिष्ठ नौकरशाहों के दिग्विजय सिंह से संबंध ठीक-ठाक हैं. चुनाव में इन नौकरशाहों की भूमिका अहम होती है. इसके अलावा वे आसानी से चुनावी संसाधन भी जुटा लेंगे. फिलहाल यह देखना होगा कि छत्तीसगढ़ से पहले मध्यप्रदेश में आलाकमान उनकी भूमिका को सीमित करता है या नहीं. जब तक इस पर आलाकमान कोई फैसला नहीं लेता है, तब तक कयासों का बाज़ार गर्म रहने की उम्मीद है. ■

feedback@chauthiduniya.com

कश्मीर में सत्ता पर कब्ज़ा

भाजपा का मिशन

हारून रेशी

जम्मू कश्मीर में घटक दलों पीडीपी और भाजपा का अंतर्विरोध अब खुल कर सामने आ गया है. भाजपा ने हुर्रियत के साथ बातचीत नहीं करने की दो टूक घोषणा कर पीडीपी को सकते में डाल दिया है. इससे पहले पीडीपी ने हुर्रियत के साथ दिल्ली की बातचीत का क्रेडिट लेने की पूरी तैयारी कर ली थी. पिछले दो साल से पीडीपी कहती रही है कि कश्मीर के मसले को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने के लिए वह केन्द्रीय सरकार को हुर्रियत और पाकिस्तान के साथ बातचीत करने पर राज़ी कर लेगी.

जम्मू-कश्मीर में भाजपा के अध्यक्ष सत शर्मा ने हाल में यह खुलासा किया है कि नई दिल्ली में उच्चस्तर पर यह फ़ैसला किया गया है कि कश्मीर में केवल उन लोगों से बातचीत की जाएगी, जो भारत के संविधान को स्वीकार करते हैं. उसके बाद दल के राष्ट्रीय महासचिव राम माधव ने भी सत शर्मा के बात की पुष्टि की. केन्द्र कश्मीर अलगाववादियों के साथ बातचीत नहीं करने के अपने पक्ष से एक इंच भी पीछे नहीं हटेगी. राम माधव का कहना है कि जो भारत के वफ़ादार नहीं हैं, उनके साथ कोई बातचीत नहीं होगी. दिलचस्प बात यह है कि राम माधव ने पीडीपी और बीजेपी के दरम्यान 'एजेंडा ऑफ एलायंस' को तैयार करने में अहम रोल अदा किया था. इसमें दोनों दलों ने हुर्रियत के साथ बातचीत करने पर इत्तेफ़ाक़ जाहिर किया था. लेकिन अब बीजेपी ने अपने वादे से मुकर कर पीडीपी को अग्निपरीक्षा में डाल दिया है. पीडीपी के उपाध्यक्ष सरताज मदनी ने सत शर्मा और राम माधव के बयानों पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि एजेंडा ऑफ एलायंस में तो बीजेपी ने हुर्रियत और पाकिस्तान के साथ बातचीत करने की बात स्वीकार की थी. उन्होंने कहा कि हुर्रियत के बग़ैर कोई भी बातचीत बेमानी होगी.

पीडीपी और बीजेपी के बीच अब कई मसलों पर विरोध खुलकर सामने आ गया है. पिछले महीने श्रीनगर लोकसभा सीट के उपचुनाव के दौरान सेना की तरफ़ से एक कश्मीरी नौजवान को जीप से बांधकर कई बस्तियों में गश्त लगाने का एक वीडियो सामने आया, तो इसे लेकर हर तरफ सेना की आलोचना हुई. लेकिन बीजेपी खुलकर सेना की हिमायत में खड़ी हो गई. राम माधव ने सेना की इस हरकत का बचाव करते हुए कहा कि मोहब्बत और जंग में सब जायज़ है. लेकिन पीडीपी को जनता के दबाव में आकर सेना के विरुद्ध एफआईआर दर्ज करानी पड़ी. परिणामस्वरूप घाटी में सेना और पीडीपी के बीच नाराज़गी बढ़ गई है. सूत्रों के अनुसार,

24 अप्रैल को पीडीपी की उच्चस्तरीय बैठक में इस बात पर बहस हुई कि पीडीपी को सेना के ख़िलाफ़ एफआईआर दर्ज करानी चाहिए थी या नहीं. कई नेताओं ने इस बैठक में कहा कि बीजेपी ने सेना के पक्ष में बयान देकर सेना की सहमति हासिल की है. ध्यान रहे कि कश्मीर के ख़राब हालत के कारण कोई भी राजनीतिक दल सेना या अन्य सुरक्षा प्रतिष्ठानों की नाराज़गी मोल नहीं लेना चाहता है, लेकिन पीडीपी को जनता के दबाव में आकर ऐसा करना पड़ा.

बीजेपी एक तरफ़ जम्मू कश्मीर में सेना और सुरक्षा प्रतिष्ठानों की पीठ ठोकने में लगी है, तो दूसरी तरफ़ हिन्दू वोटरों को अपने पक्ष में करने में जुटी है. कई विशेषज्ञों का मानना है कि दरअसल बीजेपी राज्य में आगामी विधानसभा चुनाव को ध्यान में रखते हुए अपने लिए ज़मीन तैयार कर रही है. पिछले दिनों अमित शाह ने भी जम्मू के एक दिवसीय दौरे के दौरान आरएसएस लीडरों के साथ कश्मीर के हालात पर चर्चा की. उन्होंने आरएसएस लीडर वीर भुवन से भी अलग मुलाक़ात की. इसके अतिरिक्त उन्होंने बीजेपी के विधायक और मंत्रियों के साथ भी बैठक की. इस मौक़े पर उन्होंने पार्टी के लीडरों को निर्देश दिया कि वो कश्मीर और लद्दाख में पार्टी की जड़ें मज़बूत करने के लिए क़दम उठाएं. इस दौरे के दौरान अमित शाह पीडीपी के किसी भी लीडर से नहीं मिले.

कई विशेषज्ञों का कहना है कि पीडीपी के नेताओं में यह विश्वास दृढ़ हो गया है कि घाटी में पार्टी की साख का बुरी तरह से प्रभावित होना, पार्टी के लिए हानिकारक है. शायद इसीलिए 24 अप्रैल को मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती की प्रधानमंत्री मोदी से मुलाक़ात से चंद घंटे पहले पीडीपी के वरिष्ठ नेता मुज़फ्फ़र हुसैन बेग ने कहा कि पीडीपी को बीजेपी के साथ गठबंधन तोड़ देना चाहिए. गौर करने की बात है कि मुज़फ्फ़र बेग ने पहली बार इस तरह की बात कही है. उन्होंने एक टीवी इंटरव्यू में महबूबा मुफ्ती को सलाह दी कि उन्हें बीजेपी के साथ जुड़े रहने के बजाए जनता के पास दोबारा जाना चाहिए. हाल में कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया के नेता मुहम्मद यूसुफ़ तारीगामी ने भी महबूबा मुफ्ती से कहा कि उन्हें गठबंधन छोड़ देना चाहिए. इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, पीडीपी को गठबंधन सरकार छोड़ देना चाहिए.

संभव है कि इससे पहले पीडीपी अपने घटक दल के साथ नाता तोड़ने के बारे में सोचे, केन्द्र सरकार ख़ुद राज्य सरकार को मुअत्तल कर यहां गवर्नर रूल लागू कराए. इस बारे में अब तक कई इशारे मिल चुके हैं. कई विश्लेषकों का मानना है कि भारत में राष्ट्रपति चुनाव के बाद जुलाई में यह संभव है कि केन्द्र सरकार कश्मीर में राष्ट्रपति शासन लागू करने के लिए कदम उठाए. संभवतः देश का नया राष्ट्रपति भाजपा की विचारधारा वाला होगा और इस स्थिति में जम्मू कश्मीर में गर्वनर रूल का मतलब होगा कि राज्य सीधे बीजेपी के नियंत्रण में होगा. बीजेपी ने 2014 के चुनाव में ही राज्य की 87 सदस्यों वाली विधानसभा में कम से कम 44 सीटें प्राप्त करने का मिशन शुरू किया था. उन चुनावों में उसे 25 सीटें मिली थी, जबकि पीडीपी 28 सीटें हासिल कर सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी थी. अब जबकि पीडीपी की जनता के बीच साख प्रभावित हो चुकी है, ऐसे में संभव है कि आगामी चुनाव में बीजेपी ही राज्य की सबसे बड़ा पार्टी के तौर पर उभरकर सामने आए. अगर ऐसा हुआ तो ये बीजेपी की ऐतिहासिक जीत होगी. इस लक्ष्य को पाने के लिए ज़ाहिर है कि बीजेपी को राज्य में पीडीपी, नेशनल कॉन्फ्रेंस और कांग्रेस जैसे दलों का प्रभाव कम करना होगा. ये काम इस वक्त बीजेपी बख़ूबी करती नजर आ रही है. पीडीपी को अपने वोटरों की नज़रों में गिराने का प्रयास करना, इसी सिलसिले की एक कड़ी है. ■

सूरह तलाक़ का तर्जुमा

तलाक़ पर क्या कहता है कुरान

हलाला पर जो बहस चल रही है, उसे लेकर कुरान में क्या बताया गया है, ये जानना भी जरूरी है. एक लम्बी प्रक्रिया और लम्बे समय के बाद जब तलाक़ मुकम्मल हो जाता है, तब औरत किसी भी दूसरे मर्द के साथ निकाह में बंध सकती है. यदि दूसरे निकाह के बाद उसका शौहर मर जाता है या किसी वजह से उसका तलाक़ हो जाता है, तो फिर वही लम्बी इद्दत की प्रक्रिया चलती है और उसके बाद वो औरत अपने पहले शौहर के लिए हलाल हो जाती है. यानि अब अगर वो चाहे, तो अपने पहले शौहर से निकाह कर सकती है. इसी प्रक्रिया को हलाला कहा गया है.

डॉ. सबा यूनुस

ऐ अल्लाह के बन्दों, अपनी औरतों को तलाक़ इद्दत के लिए दो और इद्दत का वक़्त गुज़ारने के बाद या तो उन्हें वापस अपने निकाह में ले लो या बाइज़्ज़त अलग कर दो. लेकिन इद्दत के दौरान उन्हें न अपने घर से निकालो न ही गलत सुलूक करो. तलाक़ के बारे में बहुत ही खूबसूरती से कुरान की सूरह तलाक़ में बताया गया है.

तलाक़ का जो सही तरीका कुरान में बताया गया है, वो कुछ इस तरह है- अगर शौहर अपनी बीवी से अलग होना चाहता है, तो वो उसे तलाक़ बोल सकता है. लेकिन ध्यान रहे, तलाक़ का उच्चारण पूरे होशो हवास में किया गया हो. तलाक़ बोलने के बाद तीन माह तक का समय इद्दत की अवधि होगा, जो तीन माहवारी का समय भी हो सकता है या अगर औरत पेट से हो, तो बच्चा पैदा होने की अवधि तक हो सकता है. इस समय के उपरांत यदि शौहर चाहे, तो दोबारा अपनी बीवी को निकाह में ले सकता है, नहीं तो दोबारा तलाक़ बोल कर फिर इद्दत की अवधि गुज़ारी जाएगी. इस अवधि के बीत जाने के बाद भी निकाह में वापस लेने की सुविधा खुली है. नहीं तो तीसरी बार तलाक़ बोलने पर इद्दत की अवधि के उपरान्त निकाह खतम हो जाएगा और इसके बाद शौहर चाह कर भी बीवी को निकाह में वापस नहीं ले सकता. अब अगर बीवी चाहे, तो वो किसी भी दूसरे मर्द से निकाह कर सकती है.

तीन तलाक़ बोल कर निकाह ख़त्म करने का ये जो मामला अभी चल रहा है, असल में तलाक़ का ऐसा कोई तरीका इस्लाम में है ही नहीं. ये कुछ ग़लत इरादों वाले इंसानों की बनाई हुई रिवायत है, जिस पर मुसलमानों का एक छोटा और जाहिल तबका आंख मूंद कर अमल कर रहा है. यदि क़ायदे से कुरान को समझा जाए, तो कहीं पर भी हमें एक झटके से निकाह ख़तम करने की कोई आयत नहीं मिलेगी. इस्लाम में तो औरतों के हक़ और इज़्ज़त के लिए तमाम सुविधाएं हैं.

हलाला पर जो बहस चल रही है, उसे लेकर कुरान में क्या बताया गया है, ये जानना भी जरूरी है. एक लम्बी प्रक्रिया और लम्बे समय के बाद जब तलाक़ मुकम्मल हो जाता है, तब औरत किसी भी दूसरे मर्द के साथ निकाह में बंध सकती है. यदि दूसरे निकाह के बाद उसका शौहर मर जाता है या किसी वजह से उसका तलाक़ हो जाता है, तो फिर वही लम्बी इद्दत की प्रक्रिया चलती है और उसके बाद वो औरत अपने पहले शौहर के लिए हलाल हो जाती है. यानि अब अगर वो चाहे, तो अपने पहले शौहर से निकाह कर सकती है. इसी प्रक्रिया को हलाला कहा गया है.

मतलब ये स्पष्ट है कि न तो तीन बार तलाक़ बोलने से फौरन तलाक़ हो सकता है और न ही पहले शौहर से तुरंत दोबारा निकाह हो सकता है. जो इस्लाम को सही से समझते और जानते हैं, वे कभी भी झटके वाली इस घटिया तीन तलाक़ की प्रक्रिया का इस्तेमाल नहीं करते. इस्लाम में तो औरत को फूल की तरह रखने का हुक्म है. कोई बेजा नाइंसाफी न करने का हुक्म है. इसीलिए तलाक़ की प्रक्रिया भी इतनी लम्बी रखी गई है कि अगर ग़लती से या गुस्से से तलाक़ बोला भी है, तो मर्द अपनी ग़लती का काफ्फारा कर ले और इद्दत की अवधि के दौरान निकाह बचा ले. वो भी एक बार नहीं, तीन बार उसे ये मौका दिया जाता है.

अब जरा सोचिए, इस्लाम में निकाह बचाने की जो ये बेहतरीन सुविधा दी गई है, वहां इस झटके वाले तीन तलाक़ के कांसेप्ट का चलन मुमकिन ही नहीं है. मुसलमानों को ज़रूरत है, जाहिलता से बाहर निकलने की. ज़रूरत है, तर्जुमे के साथ खुद कुरान पढ़ने की. जरूरत इस बात की भी है कि औरतें अपना हक जानें और ग़लत रिवाज़ फैलाने वालों का बहिष्कार करें. ■

तीन तलाक़ बोल कर निकाह ख़त्म करने का ये जो मामला अभी चल रहा है, असल में तलाक़ का ऐसा कोई तरीका इस्लाम में है ही नहीं. ये कुछ ग़लत इरादों वाले इंसानों की बनाई हुई रिवायत है, जिसपर मुसलमानों का एक छोटा और जाहिल तबका आंख मूंद कर अमल कर रहा है. यदि क़ायदे से कुरान को समझा जाए, तो कहीं पर भी हमें एक झटके से निकाह ख़त्म करने की कोई आयत नहीं मिलेगी. इस्लाम में तो औरतों के हक़ और इज़्ज़त के लिए तमाम सुविधाएं हैं.

(लेखिका समाजशास्त्र की प्रोफेसर और सामाजिक कार्यकर्ता हैं)

feedback@chauthiduniya.com

'गागर' से छलका किसानों का दर्द

चंदन राय

दो दशक पहले मध्यप्रदेश के छतरपुर जिले में जल संचय के लिए एक अंधियारे तालाब की सरकार ने खुदाई कराई थी. बारिश होने पर अंधियारा तालाब लबालब भर गया, लेकिन अगले ही दिन फिर खाली. जांच में पता चला कि बगैर सोचे-समझे खुदाई होने के कारण तालाब की झिर टूट गई थी. इसी झिर के कारण तालाब का पानी यहां की स्थानीय ग्रेनाइट भू संरचना से अलग था. आज सरकार सूखे से राहत के लिए कई सिंचाई परियोजनाएं चला रही है. बिना सोचे-समझे इन परियोजनाओं पर करोड़ों रुपए खर्च हो रहे हैं, पर शायद ही कोई परियोजना तय समय पर पूरी होती है या किसानों को उसका लाभ मिलता है. सच तो ये है कि इन सिंचाई परियोजनाओं से पूंजीपतियों के उद्योग तो खूब फल-फूल रहे हैं, लेकिन किसान आज भी बेहाल हैं.

छत्तीसगढ़ किसान सभा और आदिवासी एकता महासभा के बैनर तले आज हजारों किसान और आदिवासी अंबिकापुर में विरोध-प्रदर्शन कर रहे हैं. बलरामपुर जिले के ग्यारह गांवों को बेहतर सिंचाई सुविधा देने के लिए सरगुजा जिले के लुंड्रा तहसील में गागर फीडर जलाशय का निर्माण हो रहा है. ग्रामीणों का कहना है कि जहां पर गागर फीडर का निर्माण हो रहा है, उससे सरगुजा के किसानों को कोई लाभ नहीं होगा. लेकिन इस परियोजना से सात गांवों की 300 हेक्टेयर से अधिक जमीन प्रभावित हो रही है. पिछले कई वर्षों से स्थानीय लोग खेती कर गुजर-बसर करते हैं. यदि जमीन का अधिग्रहण कर जलाशय का निर्माण किया गया, तो इससे उनकी आजीविका छिन जाएगी.

इस विशाल जलाशय के निर्माण का प्रस्ताव 10 साल पुराना है. प्रस्ताव के अनुसार, इससे 11 गांवों को सिंचाई के लिए पानी मिलना है यानि कह सकते हैं कि ग्यारह गांवों को सिंचित करने के लिए सात बसे-बसाए गांवों को उजाड़ा जा रहा है. किसान कहते हैं, जब उन्हें सिंचाई के लिए पानी ही नहीं मिलेगा, तो वे अपनी जमीन क्यों दें? जलाशय निर्माण से यह पूरा इलाका डूब क्षेत्र में आ जाएगा, लेकिन इसका लाभ बलरामपुर जिले को मिलेगा. वहीं, राज्य सरकार ने सरगुजा जिले के कुंदी क्षेत्र में गागर नदी पर बड़े बांध निर्माण के लिए 36 करोड़ रुपयों की मंजूरी दे दी है. इस परियोजना से खालपोड़ी, करगीडीह, बकना, चलगली, उदारी, डकई, डडगांव, कुंदी आदि गांवों के किसानों की जमीन छिन जाएगी, जिससे 10,000 से अधिक लोग प्रभावित होंगे.

गागर बांध का निर्माण संविधान की पांचवीं अनुसूची के प्रावधानों का उल्लंघन है. भू-अधिनियम की धारा 41 के तहत इन इलाकों में ग्राम सभाओं की सहमति के बगैर भू-अधिग्रहण नहीं किया जा सकता है. ग्रामीणों का आरोप है कि जलाशय को लेकर बुलाई गई ग्राम सभाओं की बैठकों के रजिस्टर में छोड़े गए खाली जगह पर फर्जी हस्ताक्षर कर दिए गए. प्रशासन को इतनी जल्दी थी कि हड़बड़ी में एक पंचायत के प्रस्ताव पर एक महिला सरपंच के हस्ताक्षर कर दिए, जबकि उस पंचायत में कभी कोई महिला सरपंच नहीं रही है. ग्रामसभा के फर्जी प्रस्ताव का सहारा लेने का खुलासा 2016 में लुंड्रा में आयोजित एक जन सुनवाई के दौरान हो गया था. तब पांच गांवों के हजारों किसानों ने बांध निर्माण का पुरजोर विरोध कर प्रस्ताव को फर्जी करार दिया था.

नेताओं की पैंतरेबाजी में उलझी चाल

पिछले विधानसभा और लोकसभा चुनावों के दौरान गागर फीडर जलाशय निर्माण एक प्रमुख चुनावी मुद्दा था. तब कांग्रेस और भाजपा, दोनों ने यह आश्वासन दिया था कि जलाशय का निर्माण नहीं होने दिया जाएगा. विधानसभा चुनाव में प्रदेश में भाजपा की सरकार बन गई, लेकिन क्षेत्र से कांग्रेस का प्रत्याशी जीता. वहीं, लोकसभा चुनाव में इस क्षेत्र से भाजपा का सांसद बना और केंद्र में भाजपा की सरकार है. आज कांग्रेस-भाजपा दोनों ही इस मुद्दे पर चुप्पी साधे हैं. किसानों को जब अपने छले जाने का अहसास हुआ, तब उन्होंने किसान सभा के झंडे तले संघर्ष का ऐलान किया. ■

यूं फर्जी प्रस्ताव का हुआ पर्दाफाश

जल संसाधन विभाग ने 22 अगस्त 2015 को खालपोड़ी पंचायत की ग्रामसभा का प्रस्ताव पेश किया था, जिसमें सिंचाई परियोजना को ग्रामीणों ने सहमति दी थी. ग्रामीणों के विरोध के बाद लुंड्रा विधायक चिंतामणि महाराज ने कहा कि विभाग का यह प्रस्ताव सही है या गलत, इसकी जांच के लिए ग्राम पंचायत का रजिस्टर चेक किया जाएगा. जब खालपोड़ी ग्राम पंचायत द्वारा आयोजित मीटिंग की जांच के लिए रजिस्टर देखा गया, तब पता चला कि उक्त तारीख को ग्राम सभा की कोई बैठक ही नहीं हुई थी. खालपोड़ी ग्राम पंचायत की वर्तमान सरपंच कौशल्या मरकाम हैं. प्रस्ताव पारित होने की तिथि के दौरान भी कौशल्या ही खालपोड़ी की सरपंच थीं. लेकिन उक्त प्रस्ताव में पूर्व सरपंच हरिहर साय के हस्ताक्षर हैं. वहीं, पूर्व सरपंच का भी कहना है कि उन्होंने ऐसे किसी प्रस्ताव पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं. चिंतामणि महाराज ने कहा कि गलत तरीके से प्रस्ताव पारित करने के प्रयास में प्रशासन ने बहुत बड़ी चूक कर दी है. ■

किसान व आदिवासियों की आंखें तब खुलीं, जब भूमि का मुआवजा देने के लिए नोटिस थमाए जाने लगे. आदिवासियों की बहुफसली जमीन को बंजर बताते हुए प्रशासन ने एकतरफा फैसला लेते हुए 60 हजार से एक लाख रुपए प्रति एकड़ की मुआवजा राशि तय कर दी. ग्रामीणों की असहमति के बावजूद प्रशासन बलपूर्वक जमीन अधिग्रहण करने लगा. जलाशय प्रभावित क्षेत्रों में आदिवासियों को पहले वन भूमि का पट्टा दिया गया था. अब जमीन अधिग्रहण के नाम पर प्रशासन उक्त पट्टों को ग्राम चौकीदार के माध्यम से वापस ले रहा है. ग्रामीण किशुन महतो कहते हैं कि यह वनाधिकार कानून का सरासर उल्लंघन है. सरकार के पास विस्थापित ग्रामीणों के पुनर्वास की कोई योजना नहीं है. हम जान दे देंगे, लेकिन जमीन नहीं देंगे. बांध के निर्माण से इस क्षेत्र के किसान तबाह हो जाएंगे.

छत्तीसगढ़ किसान सभा ने 17 मार्च को एक विशाल रैली का आयोजन किया. रैली में 1000 से ज्यादा ग्रामीणों ने हिस्सेदारी की, जिसमें अधिकतर आदिवासी और महिलाएं शामिल थीं. रैली के पूर्व किसान सभा ने एक व्यापक अभियान चलाकर ग्रामीणों को लामबंद किया था. इस दौरान कई गांवों में बैठकें की गईं. फर्जी प्रस्ताव की जानकारी देकर ग्रामीणों को सच से रूबरू कराया गया. यही कारण है कि रैली में पचासों किमी दूर से पैदल चलकर सैकड़ों आदिवासी रैली में शरीक हुए.

किसानों के विरोध के कारण उद्घाटन के बाद से ही गागर फीडर जलाशय का काम ठप है. हालांकि विभागीय अधिकारी किसी तरह काम शुरू करने के लिए पूरी ताकत झोंके हैं. जल संसाधन बलरामपुर के कार्यपालन अभियंता रामटेकर कहते हैं कि जिला प्रशासन की ओर से भू-अर्जन की प्रक्रिया पूरी कर जमीन उपलब्ध कराई जाएगी, तभी काम शुरू होगा. ग्रामसभा से सहमति, भू-अर्जन आदि हमारा काम नहीं है. वहीं, लुंड्रा विधायक चिंतामणि महाराज समेत कई स्थानीय नेता इस परियोजना पर प्रशासन से पुनर्विचार की मांग कर रहे हैं.

इंटरनेशनल क्रॉप्स रिसर्च इंस्टीट्यूट के कृषि विशेषज्ञ बोन एप्पन और श्री सुब्बाराव का कहना है कि तालाबों से सिंचाई करना किसानों के लिए आर्थिक दृष्टि से लाभदायक और अधिक उत्पादक होता है. उनका सुझाव है कि पुराने तालाबों के संरक्षण और नए तालाब बनाने के लिए भारतीय तालाब प्राधिकरण का गठन किया जाना चाहिए. पूर्व कृषि आयुक्त बीआर भंबूला का भी मानना है कि जिन इलाकों में सालाना बारिश का औसत 750 से 1150 मिमी है, वहां नहरों की अपेक्षा तालाब से सिंचाई अधिक लाभप्रद होती है. यदि विभिन्न सिंचाई योजनाओं पर खर्च बजट व उससे हुई सिंचाई और हजार साल पुराने तालाबों के क्षमता की तुलना करें तो आधुनिक इंजीनियरिंग के नुकसान ही ज्यादा नजर आते हैं. ऐसे में नीति निर्धारकों को यह तय करना है बड़े जलाशयों का निर्माण कर बांध कंपनियों व उद्यमियों को फायदा पहुंचाना है या फिर सूखे से राहत देने के लिए परंपरागत साधनों की ओर लौटना ही बेहतर विकल्प है. ■

feedback@chauthiduniya.com

तेजी से घट रही विदेशी पर्यटकों की संख्या

अतिथि देवो भव: वाले देश में क्यों नहीं आ रहे अतिथि

"गौरवमयी अतीत, गंगा-जमुनी तहज़ीब और विविधतापूर्ण सांस्कृतिक विरासत वाला अतुलनीय भारत हमेशा से ही विदेशी पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है. लेकिन हाल के वर्षों में ऐसा क्या हुआ कि अतिथि देवो भव: वाले टैग लाइन से विदेशी सैलानियों का विश्वास कम होता जा रहा है?"

निरंजन मिश्रा

जिस देश के पर्यटन मंत्रालय का टैगलाइन ही अतिथि देवो भव: हो और जहां की अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग का योगदान छह प्रतिशत तक का हो, वहां अगर अतिथि आने में कतराने लगें, तो ये देश के लिए चिंता की बात होनी चाहिए. विदेशी सैलानियों को भारत हमेशा से आकर्षित करता रहा है. लेकिन पर्यटन मंत्रालय की एक रिपोर्ट बताती है कि 2013 के मुकाबले 2015 में भारत आने वाले विदेशी सैलानियों की संख्या में तेजी से कमी आई है. गौर करने वाली बात ये है कि जिन देशों से आने वाले पर्यटकों की संख्या में कमी आई है, उनमें से ज्यादातर देश ऐसे हैं, जहां भारतीय पर्यटन मंत्रालय के कार्यालय हैं. देश के बाहर 14 शहरों, न्यूयॉर्क, लॉस एंजिलिस, टोरंटो, फ्रेंकफर्ट, मिलान, एम्सटरडम, पेरिस, लंदन, दुबई, जोहानिसबर्ग, टोक्यो, बीजिंग, सिडनी और सिंगापुर के ये कार्यालय, वहां भारतीय पर्यटन मंत्रालय के प्रचार-प्रसार के लिए काम करते हैं.

पर्यटन मंत्रायल के इन विदेशी कार्यालयों के योगदान को इस बात से समझा जा सकता है कि 2013 के मुकाबले 2015 में फ्रांस से आने वाले पर्यटकों की संख्या 2,48,379 से घटकर 2,30,854 हो गई. सिर्फ फ्रांस ही नहीं, जर्मनी, इटली, नीदरलैंड, ऑस्ट्रिया, बेल्जियम, डेनमार्क, यूनान, स्विटजरलैंड और स्वीडन जैसे संपन्न यूरोपीय देशों से भारत आने वाले पर्यटकों की संख्या भी तेजी से घटी है. दक्षिण अफ्रिका से आने वाले पर्यटकों की संख्या में तो 2013 के मुकाबले 2015 में 10.51 प्रतिशत की कमी आई है. विदेशों में पर्यटन मंत्रालय के जरिए प्रचार-प्रसार के बाद भी सैलानियों की संख्या में आ रही कमी को देखते हुए सरकार इन कार्यालयों को बंद करने पर विचार कर रही है. नीति आयोग ने इस बारे में प्रधानमंत्री कार्यालय को अपनी रिपोर्ट सौंपी है. इस रिपोर्ट में कहा गया है कि देश के बाहर 14 शहरों में स्थित पर्यटन मंत्रालय के इन कार्यालयों का कोई फायदा देखने को नहीं मिल रहा है. भारत आने के लिए विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने के अपने काम में ये कार्यालय असफल होते दिख रहे हैं. रिपोर्ट में इस बात का भी जिक्र है कि पर्यटन के मामले में भारत के प्रचार-प्रसार में उन कार्यालयों द्वारा किया जाने वाला खर्च व्यर्थ जा रहा है. इसलिए इन्हें बंद कर देना चाहिए.

2013 की तुलना में 2015 में कम हुई विदेशी पर्यटकों की संख्या

देश	2013	2015	कमी (प्रतिशत में)
जर्मनी	2,52,003	248,314	-1.46
नीदरलैंड	69,547	66,181	-4.84
इटली	93,951	88091	-6.24
जापान	2,20,283	2,07,415	-5.84
फ्रांस	2,48,379	2,30,854	-7.06
दक्षिण अफ्रिका	58,023	51,922	-10.51

हालांकि, ये भी सच है कि प्रचार का सकारात्मक परिणाम तभी सामने आएगा जब उसका कोई आधार हो. पर्यटन मंत्रालय का पैसा बचाने के लिए विदेशों के कार्यालयों को बंद करने पर विचार कर रही सरकार, भारत में पर्यटकों की संख्या बढ़ाने पर ध्यान देती नहीं दिख रही है. कई रिपोर्टस में ये बात खुलकर सामने आ चुकी है कि भारत में विदेशी पर्यटक खुद को सुरक्षित महसूस नहीं करते. आए दिन विदेशी पर्यटकों के साथ हिंसा, छिना-झपटी और महिला पर्यटकों के साथ बलात्कार की भी घटनाएं सामने आती हैं. दिल्ली के दामिनी प्रकरण के बाद विदेशी महिला पर्यटकों की घटती संख्या को देखते हुए केंद्र की नई सरकार ने तमाम जरूरी कदम उठाने की बात कही थी. फरवरी 2014 में पर्यटन मंत्रालय से सम्बंधित संसदीय समिति ने मंत्रालय को स्पष्ट निर्देश दिया था कि भारत आने वाले विदेशी पर्यटकों की सुख-सुविधा का विशेष ध्यान रखा जाय. साथ ही महिला पर्यटकों की सुरक्षा के लिए कड़े नियम बनाए जाएं. उस समय संसदीय समिति ने विदेशी पर्यटकों की संख्या में हो रही कमी को रोकने के लिए कई व्यवस्थाओं को दुरुस्त करने का सुझाव भी दिया था. संसदीय समिति ने पर्यटन उद्योग में लगे लोगों में कुशलता की कमी, तमाम पर्यटन स्थलों पर विदेशी पर्यटकों के ठहरने में होने वाली असुविधा, पर्यटकों के साथ छेड़छाड़, हिंसा की घटनाएं और पर्यटन स्थलों की गंदगी जैसी समस्याओं को जल्द से जल्द दूर करने को कहा था. इसके बाद पर्यटन मंत्रालय ने तमाम पर्यटक स्थलों पर टुरिस्ट पुलिस की तैनाती की बात कही थी. लेकिन सरकार का वो कदम भी बहुत प्रभावी नहीं हुआ. अब तक सिर्फ 13 राज्यों ने ही सरकार के उस आदेश पर अमल किया है. आंध्र प्रदेश, गोवा, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, मध्य प्रदेश और ओड़ीशा में ही पर्यटक स्थलों पर ही टुरिस्ट पुलिस की तैनाती की जा सकी है.

भारत को विदेशी पर्यटकों के लिए पहली पसंद बनाना तो दूर की बात है, पर्यटन मंत्रालय की नई गाइडलाइंस उनके लिए समस्या बन रही हैं. किसी और सभ्यता-संस्कृति को जीने वाले लोगों के लिए चंद दिनों के टूर में दूसरे देश के रहन-सहन को अपनाना मुश्किल भरा काम है. अगस्त 2016 में केंद्रीय संस्कृति और पर्यटन मंत्री महेश शर्मा ने आगरा में पर्टयकों के लिए एक बुकलेट जारी किया था. विदेशी पर्यटकों के लिए 'क्या करें-क्या न करें' के सुझाव वाले उस बुकलेट की बातों का हवाला देते हुए महेश शर्मा ने कहा था कि भारत आने वालीं विदेशी महिला पर्यटक स्कर्ट या अन्य छोटे कपड़े नहीं पहनें और वे रात में अकेले बाहर निकलने से परहेज करें. हालांकि जब महेश शर्मा को लगा कि उनके बयान और इस बुकलेट पर विवाद हो सकता है, तो उन्होंने कहा कि कपड़ों को लेकर उन्होंने किसी तरह के दिशानिर्देश जारी नहीं किए हैं. भले ही मंत्री जी ने इससे सम्बंधित बयान से पीछा छुड़ा लिया, लेकिन वो बुकलेट अब भारत आने वाले सभी पर्यटकों को दिया जाता है और उसके दिशा-निर्देशों को मानने की बात कही जाती है. विदेशी पर्यटकों के लिए सुरक्षा तंत्र बहाल कर पाने में नाकाम भारत सरकार के द्वारा उनके पहनावे और संस्कृति पर बंदिश लगाना भी एक महत्वपूर्ण कारण है, भारत से विदेशी पर्यटकों के दुराव का. 2015 में आई एसोचैम की एक रिपोर्ट बताती है कि दुनिया के कई महत्त्वपूर्ण देशों में बढ़ती आतंक की घटनाओं के कारण विदेशी सैलानी अब भारत का रुख कर रहे हैं. लेकिन अब भारत से भी विदेशी पर्यटकों की दूरी, भारत सरकार के लिए चिंता का विषय है. ■

feedback@chauthiduniya.com

कश्मीर और पूर्वोत्तर पर अलग-अलग मापदंड क्यों

www.kamalmorarka.com

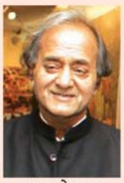

कमल मोरारका

अगस्त 2015 में नरेंद्र मोदी और एनएससीएन-आइएम (इजाक मुइवा) के बीच जल्दबाज़ी में एक सहमति के समझौते (एमओयू) पर हस्ताक्षर हुआ था. यहां तक कि गृहमंत्री को इसकी जानकारी नहीं थी. बाद में उन्हें हस्ताक्षर करने और फोटो खिंचवाने के लिए बुलाया गया था. आज तक किसी को नहीं मालूम था कि उस एमओयू का विषय क्या था? लोग पूछ रहे थे और सरकार गोल-मोल जवाब दे रही थी. लेकिन अब जो खबरें सामने आई हैं, यदि उन पर विश्वास किया जाए, तो सरकार ने नगाओं को बड़ी रियायतें दी हैं. इन रियायतों में शायद न्यायपालिका और वित्त सम्बंधी रियायतें शामिल हैं.

हम एक बहुत दिलचस्प दौर से गुज़र रहे हैं. हालांकि देश के हालात ठीक नहीं हैं. राजस्थान हाई कोर्ट के एक जज ने रिटायर होने से ठीक पहले अपने फैसले में कहा कि गाय को राष्ट्रीय पशु घोषित कर देना चाहिए. उन्होंने मोर को लेकर भी एक टिप्पणी की. इस मूर्खतापूर्ण टिप्पणी से मैं हैरान हूं कि ये व्यक्ति हाई कोर्ट तक कैसे पहुंच गया! बहरहाल, प्रेस द्वारा ऐसी बात को व्यापक कवरेज देना, जो फैसले का हिस्सा नहीं है, समझ से परे है. गाय बेशक एक संवेदनशील विषय है. भारत सरकार को इस पर कोई नीति तैयार करनी चाहिए, जिसका ज़िक्र मैं पहले भी कर चुका हूं, फिर उसके बाद उसपर सार्वजनिक चर्चा होनी चाहिए. नरेंद्र मोदी की सरकार पूर्वोत्तर में या गोवा में बीफ पर पाबंदी नहीं लगा सकती, क्योंकि उन्होंने खुद ही ऐसी बात कही है. लिहाज़ा, इस मुद्दे पर एक स्पष्ट राष्ट्रीय नीति की आवश्यकता है, ताकि गौ रक्षकों का मनमाना रवैया या न्यायपालिका समेत अन्य संस्थाओं और संगठनो द्वारा टिप्पणी का सिलसिला समाप्त हो सके. मैं आशा करता हूं कि नरेंद्र मोदी इस ओर कोई कदम उठाएंगे.

दूसरा चिंताजनक मुद्दा नगा समझौते पर हस्ताक्षर की खबर है. अगस्त 2015 में नरेंद्र मोदी और एनएससीएन-आइएम (इजाक मुइवा) के बीच जल्दबाज़ी में एक सहमति के समझौते (एमओयू) पर हस्ताक्षर हुआ था. यहां तक कि गृहमंत्री को इसकी जानकारी नहीं थी. बाद में उन्हें हस्ताक्षर करने और फोटो खिंचवाने के लिए बुलाया गया था. आज तक किसी को नहीं मालूम था कि उस एमओयू का विषय क्या था? लोग पूछ रहे थे और सरकार गोल-मोल जवाब दे रही थी. लेकिन अब जो खबरें सामने आई हैं, यदि उन पर विश्वास किया जाए, तो सरकार ने नगाओं को बड़ी रियायतें दी हैं. इन रियायतों में शायद न्यायपालिका और वित्त सम्बंधी रियायतें शामिल हैं. लेकिन मुझे विषयवस्तु की जानकारी नहीं है. एक तरह से ये समाधान की ओर उठाया गया एक क़दम था. लेकिन मामला ये नहीं है.

नगा समस्या जवाहरलाल नेहरू और एजेड फिजो (जो उस समय नगा चीफ थे) के ज़माने से अटका हुआ है. भारत सरकार भारतीय संविधान के तहत समस्या का समाधान करना चाहती थी. लेकिन नगा उसके लिए तैयार नहीं थे. अंत में 1980 और 1990 के दशक में इजाक मुइवा ग्रुप ने समझदारी दिखाई और कई दौर की वार्ता की. इसमें मुख्य वार्ताकार भारत के पूर्व गृह सचिव श्री के पद्मनाभैया थे. उसी समय से ये लगने लगा था कि कोई न कोई बीच का रास्ता निकाल लिया जाएगा. 2015 में जब

एक तरफ, दलाई लामा के अरुणाचल दौरे की वजह से चीन गुस्से में है. ज़ाहिर है, चीन का गुस्सा जायज़ नहीं है, भारत का पक्ष सही है. लेकिन दूसरी तरफ, हम कश्मीर पर अपनी आखें बंद नहीं कर सकते. ये कहना ठीक नहीं है कि ये सुरक्षा का मामला है और शांति स्थापित करने के लिए हमें जितनी ज़रूरत होगी, उतने लोगों को मार देंगे. कश्मीर का एक लम्बा इतिहास है, पुराने समझौते हैं. कश्मीर में जनमत संग्रह कराने की बात कही गई थी, लेकिन इस मामले में पाकिस्तान ने गलती की. यदि उसने अपनी सेना वापस बुला ली होती, जैसा कि लॉर्ड माउंटबेटेन ने उन्हें सुझाव दिया था, तो जनमत संग्रह हो गया होता. माउंटबेटेन ने ये भी कहा था कि जनमत संग्रह में लोग पाकिस्तान जाना पसंद करेंगे. लेकिन पाकिस्तान आश्वस्त नहीं था, इसलिए उनसे गलती हुई.

अचानक मोदी ने एमओयू पर हस्ताक्षर किया, तो लोगों को ये जल्दबाज़ी समझ में नहीं आई. समझौते के बाद इजाक की मौत हो गई. अब हमें ये नहीं मालूम कि इस समझौते पर किन-किन लोगों के हस्ताक्षर हैं. आई एम ग्रुप के हस्ताक्षर हैं या दूसरे ग्रुप के या फिर दोनों ने साझा तौर पर हस्ताक्षर किए हैं. ये किसी को मालूम नहीं है. केंद्र में एक ज़िम्मेदार सरकार है, इसलिए मैं ये आशा करता हूं कि उन्होंने कुछ ऐसा नहीं किया होगा, जिससे देश की संप्रभुता प्रभावित हुई हो.

एक सीमावर्ती राज्य होने के नाते नगालैंड को अलग तरीके से हैंडल करने की आवश्यकता है. उसे कुछ हद तक स्वायत्तता दी जा सकती है. लेकिन अजीब बात ये है कि जम्मू कश्मीर, जिससे आपने स्वायत्तता का वादा किया है, उसकी स्वायत्तता को तो आपने कमज़ोर कर दिया है. ऐसा अभी नहीं हुआ, बल्कि ये काम कांग्रेस के पूरे कार्यकाल के दौरान हुआ है.

कश्मीर के मामले में सरकार कह रही है कि ये सुरक्षा का मामला है. वो पाकिस्तान से बातचीत नहीं करना चाहती. आप कश्मीर के लिए एक मानक और दूसरे राज्यों के लिए दूसरा मानक इस्तेमाल नहीं कर सकते. यदि आपको दो मानक इस्तेमाल करने ही हैं, तो उसके लिए एक जैसे प्रतिमान होने चाहिए. मैं समझता हूं, समय आ गया है कि सरकार संसद का विशेष सत्र बुलाए और इन मुद्दों पर बहस करे. सरकार वहां स्पष्ट करे कि इन जातीय समूहों की समस्याओं को सुलझाने के उसके प्रतिमान और दृष्टिकोण क्या हैं. इन समूहों में नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश और मिजोरम शामिल हैं, कश्मीर एक अलग तरह का मुद्दा है. भारत एक बहुत बड़ा और बहुत महत्वपूर्ण देश है और वो इस तरह से व्यवहार नहीं कर सकता.

एक तरफ, दलाई लामा के अरुणाचल दौरे की वजह से चीन गुस्से में है. ज़ाहिर है, चीन का गुस्सा जायज़ नहीं है, भारत का पक्ष सही है. लेकिन दूसरी तरफ, हम कश्मीर पर अपनी आखें बंद नहीं कर सकते. ये कहना ठीक नहीं है कि ये सुरक्षा का मामला है और शांति स्थापित करने के लिए हमें जितनी ज़रूरत होगी, उतने लोगों को मार देंगे. कश्मीर का एक लम्बा इतिहास है, पुराने समझौते हैं. कश्मीर में जनमत संग्रह कराने की बात कही गई थी, लेकिन इस मामले में पाकिस्तान ने गलती की. यदि उसने अपनी सेना वापस बुला ली होती, जैसा कि लॉर्ड माउंटबेटेन ने उन्हें सुझाव दिया था, तो जनमत संग्रह हो गया होता. माउंटबेटेन ने ये भी कहा था कि जनमत संग्रह में लोग पाकिस्तान जाना पसंद करेंगे. लेकिन पाकिस्तान आश्वस्त नहीं था, इसलिए उनसे गलती हुई. उनकी गलती को भारत ने लपक लिया और कहा कि आप अपनी सेना वापस नहीं बुलाएंगे, तो जनमत संग्रह नहीं होगा. दोनों देशों द्वारा अपना-अपना पक्ष मजबूत करना तो ठीक है, लेकिन इससे समस्या का समाधान नहीं हो सकता.

मैं आशा करता हूं कि नरेंद्र मोदी के सलाहकारों में बुद्धिमान लोग मौजूद होंगे. मैं ये भी आशा करता हूं कि नगा समझौते से कोई नई समस्या नहीं पैदा होगी. आखिरकार, देश हमेशा कायम रहने वाली वास्तविकता है. सरकारें हर पांच साल में आती-जाती रहती हैं. मोदी का कार्यकाल दो साल में समाप्त होने वाला है, यदि वे पुनः चुन लिए जाते हैं, तो सात साल में समाप्त होगा. कोई भी अनंतकाल के लिए नहीं है. लेकिन देश अनंतकाल के लिए है. जो भी करना हो, आपको हर किसी को विश्वास में लेना होगा. संसद देश की सर्वोच्च संस्था है. संसद का सत्र बुलाइए, ऑन कैमरा सत्र चलाइए, उसमें कुछ भी गड़बड़ी नहीं है. भले ही कार्यवाही के दौरान प्रेस को बाहर कर दीजिए, लेकिन इस बात पर आम सहमति बनाइए कि कैसे भारत के इन नाराज़, असंतुष्ट और नाखुश नागरिकों से निपटा जाए. आखिरकार वे भारत के नागरिक हैं. इस सरकार का रुख ये है कि हुर्रियत से बात मत करो, पाकिस्तान से बात मत करो. लोकतंत्र में बात न करना समस्या का कोई हल नहीं है, बातचीत से ही हल निकलेगा, भले ही लम्बे समय के बाद निकले. लेकिन ये तय है कि बिना बातचीत के समस्या का समाधान कभी नहीं निकलेगा. हम सरकार और नगा समझौते की जानकारियों का उत्सुकता से इंतजार कर रहे हैं, ताकि हमें पता चल सके कि हम सही रास्ते पर हैं या नहीं. हमें आशा करनी चाहिए कि ये जानकारियां बाहर आएंगी. ■

feedback@chauthiduniya.com

कश्मीर के साथ बल प्रयोग असफल होगा

शुजात बुख़ारी

जम्मू-कश्मीर पर भारत सरकार की नीति लगभग साफ़ है. पिछले कुछ महीनों से यहां की स्थिति लगातार बदतर होती जा रही है. छात्रों की अशांति इसमें नया आयाम जोड़ रही है. दो हफ़्तों के लिए श्रीनगर के कुछ प्रमुख कॉलेज और स्कूल आधिकारिक रूप से बंद कर दिए गए हैं. उन्हें फिर से खोलना अधिकारियों के लिए एक बड़ी चुनौती है. मिलिटेंट्स के खिलाफ अभियान के दौरान स्थानीय आबादी और सुरक्षा बलों के बीच संघर्ष में कोई कमी नहीं आई है. प्रतिरोध जारी है. 4 मई को दक्षिण कश्मीर में सेना द्वारा शुरू किया गया अभियान बेनतीजा रहा. यह अभियान यहीं तक सीमित नहीं रहा. 17 मई को भी इसी तरह का एक और अभियान चलाया गया, हालांकि कम संख्या बल के साथ. सुरक्षा बलों की दुविधा यह है कि क्या इस तरह के अभियान इतने जोखिम उठाने योग्य हैं? पुलिस सूत्रों के मुताबिक, दक्षिण कश्मीर में 88 मिलिटेंट सक्रिय हैं, लेकिन उन्हें ढूंढ निकालने में बड़े पैमाने पर क्षति हो सकती है, क्योंकि लोग इसका विरोध कर रहे हैं.

रक्षा मंत्री अरुण जेटली और सेना प्रमुख जनरल बिपिन रावत ने स्थिति की समीक्षा के लिए 18 और 19 मई को श्रीनगर का दौरा किया. कश्मीर पर सख्ती बरतने के लिए भाजपा सरकार लगातार दबाव में है, लिहाज़ा उसकी नीति राजनैतिक जरूरत की बजाय सुरक्षा चिंताओं पर ज्यादा आधारित है. उसे दोधारी तलवार का सामना करना है. राष्ट्रवादी मीडिया, विशेष रूप से टीवी चैनलों ने पाकिस्तान और कश्मीर के मुट्ठी भर असामाजिक तत्वों को सबक सिखाने के लिए अपना अभियान तेज़ कर दिया है. 2019 के आम चुनाव और आगामी दो वर्षों में राज्यों में होने वाले सभी चुनावों में विजय हासिल करने की भाजपा की महत्वाकांक्षा ने कश्मीर की व्यवस्था को महत्वपूर्ण बना दिया है.

दूसरी ओर, भाजपा कश्मीर में एक ऐसी क्षेत्रीय पार्टी के साथ गठबंधन में है, जो कुछ साल पहले तक नरम अलगाववाद, कश्मीर समर्थक और संवाद समर्थक रुख अपनाए हुए थी. मुख्यमंत्री महबूबा मुफ़्ती, जो पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी (पीडीपी) की अध्यक्षा भी हैं, ने न सिर्फ राज्य के अत्याचारों द्वारा पीड़ित नागरिकों के लिए, बल्कि मिलिटेंट्स के परिवारों के साथ भी सहानुभूति दिखा कर अपना जनाधार तैयार किया. उनके पिता पाकिस्तान और हुर्रियत दोनों के साथ वार्ता और सुलह का समर्थन करते थे. यही कारण है कि जब पीडीपी और भाजपा के बीच 2015 में गठबंधन की तैयारी चल रही थी, तब गठबंधन के एजेंडे (एओए) को अंतिम रूप देने में दो महीने का समय लग गया. इसमें बातचीत का स्पष्ट उल्लेख था.

बहरहाल, एओए पर अब तक कोई प्रगति नहीं दिखी है, इसके विपरीत भाजपा और उसके वैचारिक संगठनों द्वारा उत्तेजना फैलाना कश्मीर नीति की पहचान बन गई है. इसी वजह से 2016 में गर्मियों के दौरान अभूतपूर्व अशांति फैली थी, जिसमें मानवाधिकार उल्लंघन के सभी रिकॉर्ड टूट गए थे. पैलेट गन नौजवानों को अंधा और अपंग बनाने का नया हथियार बन गया था. आंदोलन में जन भागीदारी के बावजूद सरकार का आरोप था कि पाकिस्तान ने अशांति को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी.

जब अशांति कम हुई, तब उम्मीद जगी कि नई दिल्ली मुख्यधारा और अलगाववादी नेतृत्व वाले राजनीतिक प्रतिनिधियों के माध्यम से लोगों तक पहुंचने की कोशिश करेगी. हालांकि एक संसदीय प्रतिनिधिमंडल ने सितंबर 2016 में कश्मीर का दौरा किया था, लेकिन संयुक्त हुर्रियत कॉन्फ्रेंस के नेताओं सैयद अली गिलानी, मीरवाइज उमर फारूक और यासीन मलिक ने उनसे मिलने से इंकार कर दिया. इस दौरान वे या तो पुलिस स्टेशनों में या घर में नजरबन्द थे. नतीजतन, कोई सफलता नहीं मिली. शांति प्रक्रिया इसलिए भी शुरू नहीं हो पा रही है, क्योंकि केन्द्र कश्मीर में पाकिस्तान की प्रॉक्सी वार का बहाना बनाता रहा है.

पूर्व विदेश मंत्री और भाजपा नेता यशवंत सिन्हा की अगुआई में नागरिकों के एक समूह ने जब पहल की और श्रीनगर पहुंचे तब एक अवरोध हटा. चूंकि सिन्हा एक वरिष्ठ राजनीतिज्ञ हैं, इसलिए उनकी यात्रा को गंभीरता से लिया गया और हुर्रियत नेताओं ने उनसे मुलाकात की. इसका नतीजा यह हुआ कि उनके आने के तुरंत बाद स्थिति में उल्लेखनीय सुधार दिखा. लोगों को लगा कि वे बीजेपी से हैं, उनकी बात पर केन्द्र सरकार ध्यान देगी. दुर्भाग्य से, यह ऐसा मामला नहीं था. सिन्हा ने स्वयं एक साक्षात्कार में कहा था कि उन्हें प्रधानमंत्री से मिलने के लिए एप्वॉयंटमेंट तक नहीं मिला था. दिल्ली में राजनीतिक कयासबाजी ये थी कि अपने कश्मीर मिशन को छोड़ने को लेकर सिन्हा दबाव में थे क्योंकि भाजपा इसे लेकर चिंतित थी और उसके लिए इस कदम का बचाव करना मुश्किल हो रहा था. यह आश्चर्यजनक नहीं, यदि पार्टी उन्हें बाहर का रास्ता दिखा दे और यह संकेत दे कि कश्मीर पर इस तरह का कोई प्रोसेस संभव नहीं है.

इसी वक्त गैर-भाजपा पार्टियां दिल्ली में कश्मीर कॉन्क्लेव कर रही थी, ताकि कश्मीर के वास्तविक मुद्दे की ओर देश के बाकी हिस्सों का ध्यान आकर्षित किया जा सके. जनता दल (यूनाइटेड) के शरद यादव ने इस पहल की अगुवाई की, लेकिन भाजपा के कुछ नेताओं ने इस कदम को मोदी को अपमानित करने का नाम देकर खारिज कर दिया. कांग्रेस भी पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में कश्मीर के लिए एक पॉलिसी ग्रुप बना कर प्रासंगिक बने रहने का संघर्ष कर रही है. लेकिन लाख टके का सवाल ये है कि क्या मोदी इसे गंभीरता से लेंगे?

रक्षा मंत्री अरुण जेटली और सेना प्रमुख जनरल बिपिन रावत ने स्थिति की समीक्षा के लिए 18 और 19 मई को श्रीनगर का दौरा किया. कश्मीर पर सख्ती बरतने के लिए भाजपा सरकार लगातार दबाव में है, लिहाज़ा उसकी नीति राजनैतिक जरूरत की बजाय सुरक्षा चिंताओं पर ज्यादा आधारित है. उसे दोधारी तलवार का सामना करना है. राष्ट्रवादी मीडिया, विशेष रूप से टीवी चैनलों ने पाकिस्तान और कश्मीर के मुट्ठी भर असामाजिक तत्वों को सबक सिखाने के लिए अपना अभियान तेज़ कर दिया है.

चूंकि नई दिल्ली ने अपना रुख स्पष्ट कर दिया है, इसके बाद फिर क्या विकल्प है? इसका अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है. भाजपा के महासचिव और कश्मीर पर भाजपा के महत्वपूर्ण शख्सियत राम माधव ने यह स्पष्ट किया कि हुर्रियत के साथ कोई बातचीत संभव नहीं है. प्रधानमंत्री कार्यालय में राज्य मंत्री जितेंद्र सिंह ने भी इस रुख में किसी बदलाव से इंकार कर दिया है. इंडिया टुडे के खुलासे, जिसमें एक वरिष्ठ हुर्रियत नेता को यह स्वीकार करते हुए दिखाया गया कि पैसे पाकिस्तान से आ रहे हैं, उन्होंने कहा कि कश्मीर की समस्या और आतंकवाद प्रायोजित है. उन्होंने दावा किया कि हुर्रियत के पास कोई जन समर्थन नहीं है और कश्मीर के युवा नरेंद्र मोदी के विकास मॉडल को प्राथमिकता देते हैं. इसके विपरीत, महबूबा मुफ्ती वार्ता की पैरवी कर रही हैं. जब वे 27 अप्रैल को प्रधानमंत्री मोदी से मिलीं, तो उन्होंने मीडिया को बताया कि यही एकमात्र विकल्प है. कब तक आप टकराव करते रहेंगे? हुर्रियत कॉन्फ्रेंस के साथ तब बातचीत हुई थी, जब वाजपेयी प्रधानमंत्री और लालकृष्ण आडवाणी उप प्रधानमंत्री थे. हमें वहीं से शुरुआत करनी होगी. वार्ता ही एकमात्र रास्ता है.

तथ्य यह है कि नई दिल्ली की नीति स्पष्ट है. उसकी योजना केवल सुरक्षा उपायों के जरिए कश्मीर से निपटने की है. प्रधानमंत्री मोदी भी आयरन हैंड नीति के साथ हैं, जो राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल, रक्षामंत्री अरुण जेटली और डॉ. जितेंद्र सिंह द्वारा समर्थित है. केंद्रीय गृह मंत्री राजनाथ सिंह इस विचार के नहीं हैं. 2016 की अशांति की चरम स्थिति में उन्होंने वहां तक पहुंचने की कोशिश की, लेकिन इस प्रयास को उनलोगों ने तवज्जो नहीं दिया, जो सैन्य शक्ति के माध्यम से एक मजबूत संदेश भेजना चाहते थे. पिछले कुछ हफ्तों में आतंकवादियों के सफाए के लिए सेना की तैयारी तेज की गई है. लेकिन अगर जोखिम की गणना नहीं की जाती है, तो यह कश्मीर को अनिश्चितता के एक नए चरण में धकेल सकता है. यदि यह वांछित परिणाम नहीं देता है, तो यह राज्य को एक राजनीतिक संकट में डाल सकता है. यदि सैन्य समाधान का उल्टा असर होता है, तो पीडीपी के लिए सत्ता में बने रहना कठिन हो सकता है. इसका परिणाम विपक्ष द्वारा मांगे जाने वाले राज्यपाल शासन के रूप में सामने आ सकता है. यह सब स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भाजपा के लिए एक बहुत बड़ी कीमत होगी क्योंकि यह कश्मीर में लोकतंत्र को धूमिल करेगा. श्रीनगर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र का 9 अप्रैल का चुनाव और अनंतनाग के चुनाव के रद्द होने ने दिखा दिया है कि कैसे लोगों ने इस प्रक्रिया को खारिज कर दिया, जो कभी चरम आतंकवाद की स्थिति में ही संभव था.

भारत और पाकिस्तान के बीच बेहतर संबंध नहीं बन पाने का कारण है (जिसका शिकार कश्मीर बन गया है) इन दोनों देशों के बीच बढ़ती कटुता. ताजा मामला है कुलभूषण जाधव का, जिसे पाकिस्तान में एक सैन्य अदालत ने मौत की सजा सुनाई है. इसे लेकर भी दोनों देशों के बीच संबंध और खराब हुए हैं. राष्ट्रवादी मीडिया का एक हिस्सा कश्मीर पर दावा करने के लिए, वार्ता और सुलह के मार्ग को त्यागने की वकालत कर रहा है. लेकिन उस शोर को सुनना उस प्रधानमंत्री के लिए नुकसानदायक हो सकता है, जो दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा नेता बनने की महत्वाकांक्षा रखता हो. कश्मीर के साथ बल प्रयोग असफल हो जाएगा, केवल वार्ता से ही बात बनेगी. पिछली सरकारें भी बंदूक की बेलगाम शक्ति के साथ कश्मीर के दिल और दिमाग को जीतने में विफल रही. कश्मीर तभी सामान्य स्थिति में वापस आया था, जब 2003 से 2007 के बीच नई दिल्ली और इस्लामाबाद की तरफ से बातचीत का दरवाजा खोला गया था. बाकी का इतिहास तो बंदूक और पत्थर के रूप में दुख से भरा है. ■

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

अपने आस-पास के गोकियों से बचिए

ये कहानी मुझे प्रभु जी ने सुनाई और कहा कि इस कहानी से जीवन भर सीख लेने की जरूरत है.

प्रभु जी ने कहानी की शुरुआत करते हुए कहा कि सिर्फ संपूर्ण ब्रह्माण्ड में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जिसमें ब्रह्माण्ड में पैदा हुए सभी जीव-जन्तुओं के गुण हैं. हर व्यक्ति में किसी न किसी जीव का अंश है और इसीलिए उस मनुष्य के गुणों में वो ज्यादा परिलक्षित होता है. हम किसी भी आदमी को कहते हैं कि देखो इसकी आंखें उल्लू की तरह तेज हैं. किसी को कहते हैं कि ये गदहे की तरह मूर्ख है. किसी को कहते हैं कि ये लोमड़ी की तरह चालाक है. किसी को कहते हैं कि ये शेर की तरह बहादुर है. किसी को कहते हैं कि ये कुत्ते की तरह वफादार है या कुत्ते की तरह दुम हिलाता है. किसी को कहते हैं ये सांप की तरह जहरीला है, ये आस्तीन का सांप है. किसी को कहते हैं कि ये बिच्छू की तरह डंक मारता है. किसी को कहते हैं कि ये बिल्ली की नज़र रखता है. किसी को हम ये भी कहते हैं कि ये सियार की तरह डरपोक है, गिरगिट की तरह रंग बदलता है और ये मगरमच्छ की तरह आंसू बहाता है.

हम कभी भी ये नहीं कहते कि सियार आदमी की तरह है. हम कभी नहीं कहते कि बिल्ली में कुत्ते का गुण है. हम कभी नहीं कहते कि कुत्ते में शेर का गुण है. हम कभी नहीं कहते कि भेड़िये में लोमड़ी का गुण है. सिर्फ मनुष्य एक ऐसा प्राणी है, जिसे हम किसी न किसी जीव के गुण से तलाशते हैं और परिभाषित करते हुए उसका आकलन करते हैं. प्रभु के अनुसार, इस कहानी की सीख ये है कि हमारे आसपास ऐसे बहुत सारे मनुष्य हैं, जो इन्हीं गुणों से सुशोभित हैं. वे कभी वफ़ादार नहीं हो सकते. वे हमेशा लालची होते हैं. वे हमेशा डंक मारते हैं, मौका मिलते ही काटते हैं. वक्त मिलने की देर है कि वे झूठी कहानियां फैलाते हैं और बिना चूके आपकी पीठ पर वार करते हैं, घात लगाकर हमला करते हैं. प्रभु का कहना है कि ऐसे प्राणियों को पहचानना चाहिए और इनसे सावधान रहना चाहिए. अब सवाल ये है कि ऐसे लोगों से सावधान कैसे रहें. कुछ लोगों का गुण होता है, बिच्छू की तरह डंक मारना और कुछ लोगों का गुण होता है, साधु की तरह उस डंक मारने वाले व्यक्ति को बार-बार अपने आसपास ये सोचकर स्थापित करते रहना कि वो सुधर गया होगा. लेकिन जैसे बिच्छू नहीं सुधरता, सांप नहीं सुधरता, लोमड़ी नहीं सुधरती, गीदड़ नहीं सुधरता, कुत्ता नहीं सुधरता, उसी तरह से ये व्यक्ति भी नहीं सुधरते. ये आपके साथ दो साल रहें, चार साल रहें, छः साल रहें, इनकी ज़िंदगी आपके सान्निध्य से बन जाए, ये सिर्फ अपने बारे में सोचते हैं और जब ये आपके साथ रहते हैं, तो आपके प्रभाव से अपना व्यक्तित्व बनाते हैं. अपने को सारे बाजार में बेचते हैं और जब इनका चरित्र सामने आ जाता है, तो ये बाहर जाकर भी आपको गाली देकर, आपको बदनाम कर, आपकी छवि ख़राब कर अपना स्वार्थ साधते हैं. हमारे आसपास ऐसे बहुत सारे लोग हैं और प्रभु की इस कथा को मैं आपको इसलिए सुना रहा हूं, ताकि आप भी अपने आसपास के ऐसे लोगों को पहचानें. ये लोग पत्रकारिता में हैं, ये लोग राजनीति में हैं, ये दलाली में हैं. इनमें पुरुष और नारी सभी हो सकते हैं. इसलिए प्रभु की इस कथा की सीख यही है कि जितना हो सके इन्हें पहचानने की कोशिश कीजिए.

प्रभु ने एक कहानी और सुनाई. उन्होंने कहा कि जंगल में एक छोटा कीड़ा होता है, जिसे गोकी या कोगी कहते है. इस गोकी को बहुत लोग नहीं पहचानते. लेकिन इस गोकी का गुण है कि जब कभी आप कहीं पर असावधान हों या शौच करने जाएं, तो आपके निचले स्थान से ये आपके शरीर के अंदर प्रवेश कर जाता है. ये बिना आवाज़ किए, बिना दर्द दिए, धीरे-धीरे शरीर के सारे अंगों को काटता है और फिर सर के पास जो भी जगह मिलती है, वहां से निकल जाता है और वहां से न निकल पाए तो सिर फाड़ कर निकल जाता है. ये गोकी बिना शोर किए, बिना हल्ला मचाए, बिना दर्द दिए, आपका जीवन निगल लेता है. प्रभु का कहना है कि आजकल समाज में ऐसे गोकियों की संख्या बहुत बढ़ गई है. हम पत्रकारिता में हों, हम राजनीति में हों, हम रास्ता चल रहे हों, हम किसी पर भरोसा कर उसे अपने साथ लेकर चल रहे हों. हम सिर्फ ये सोच रहे हों कि उसका जीवन निष्कंटक रहे. लेकिन वो गोकी गुण वाला व्यक्ति गोकी की तरह आपके जीवन को कुतरता रहेगा, आपकी मेहनत का श्रेय लेता रहेगा और वक्त आने पर आपको अपने प्राणों से हाथ धोने की स्थिति में लाकर खड़ा कर देगा. प्रभु का कहना है कि इन गोकियों को पहचानना बहुत आवश्यक है. हालांकि इसे पहचाना नहीं जा सकता, लेकिन इससे सावधान रहने की कोशिश की जा सकती है.

ये कहानी मैं आपको इसलिए सुना रहा हूं, क्योंकि आपके आसपास भी ऐसे बहुत गोकी होंगे. उन गोकियों से सावधान रहिए. कुछ कहावतें और हैं, हाथी चलता है तो कुत्ते भौंकते हैं. इन कुत्तों की परवाह नहीं करनी चाहिए, लेकिन उन लोगों की परवाह करनी चाहिए, जो आपके साथ रहकर आपकी पीठ में छुरा भोंकते हैं और आपसे सारी शक्ति लेकर आपके ही खिलाफ उसका इस्तेमाल करते हैं. फिर बैठकर कहानियां बनाते हैं और फिर आपको बर्बाद करने की योजना बनाने में जोर-शोर से जुट जाते हैं.

इनका सामना कैसे करें? इसका कोई एक रास्ता नहीं है. ये सभी को सोचना है. अगर किसी के पास इन गोकी जैसे लोगों से या विभिन्न गुणों वालों जीवधारियों से लैस अपने आसपास के लोगों से बचने का कोई उपाय हो, तो आप इसे सबके साथ बांटिए और ख़ासकर हमारे साथ ज़रूर बांटिए. ये लोग आपसे गुण में नहीं लड़ सकते, ये लोग आपसे साख में नहीं लड़ सकते, ये लोग आपसे हिम्मत में नहीं लड़ सकते, ये लोग आपसे मेहनत में नहीं लड़ सकते, ये लोग आपसे ईमानदारी में नहीं लड़ सकते, ये लोग आपसे ग्लैमर में नहीं लड़ सकते. ये लोग बिच्छू की तरह डंक मार सकते हैं, ये सांप की तरह डस सकते हैं, ये लोमड़ी की तरह आपको भटका सकते हैं और आपको दिशा भ्रमित कर सकते हैं. अगर इनसे बचने के कोई उपाय हों, तो तलाशिए ज़रूर और हमें भी बताइए. ■

ये कहानी मैं आपको इसलिए सुना रहा हूं, क्योंकि आपके आसपास भी ऐसे बहुत गोकी होंगे. उन गोकियों से सावधान रहिए. कुछ कहावतें और हैं, हाथी चलता है तो कुत्ते भौंकते हैं. इन कुत्तों की परवाह नहीं करनी चाहिए, लेकिन उन लोगों की परवाह करनी चाहिए, जो आपके साथ रहकर आपकी पीठ में छुरा भोंकते हैं और आपसे सारी शक्ति लेकर आपके ही खिलाफ उसका इस्तेमाल करते हैं. फिर बैठकर कहानियां बनाते हैं और फिर आपको बर्बाद करने की योजना बनाने में जोर-शोर से जुट जाते हैं. इनका सामना कैसे करें? इसका कोई एक रास्ता नहीं है. ये सभी को सोचना है. अगर किसी के पास इन गोकी जैसे लोगों से या विभिन्न गुणों वाले जीवधारियों से लैस अपने आसपास के लोगों से बचने का कोई उपाय हो, तो आप इसे सबके साथ बांटिए और ख़ासकर हमारे साथ ज़रूर बांटिए.

editor@chauthiduniya.com

आर या पार

आदिवासियों के ग़ुस्से की वजह को समझें

परंजय गुहा ठाकुरता

भारत के आंतरिक युद्ध में दोनों तरफ जो मारे जाते हैं, वे इसी देश के नागरिक हैं. लेकिन 24 अप्रैल, 2017 को सुकमा की घटना के बाद बड़े मीडिया घरानों और सरकारी अधिकारियों की प्रतिक्रिया को तुलनात्मक तौर पर देखना जरूरी है. 24 अप्रैल को सीआरपीएफ के 25 जवान मारे गए. माओवादियों की ओर से कहा गया कि यह हमला 13 अक्टूबर, 2016 के आंध्र प्रदेश के ग्रेहाउंडस द्वारा ओडिशा के मलकानगिरी में की गई उस कार्रवाई के जवाब में किया गया है, जिसमें 24 माओवादियों की जान गई थी. सुकमा की घटना के बाद मीडिया और सरकार में गुस्सा और बदले की भावना दिखी और मलकानगिरी के बाद चुप्पी. लेकिन अब वक्त आ गया है कि भारत के अंदर सरकार और माओवादियों के बीच चल रहे इस युद्ध के बारे में बात की जाए. मलकानगिरी में अचानक हमला कर 24 माओवादियों को मारा गया. सुकमा में भारी शस्त्र बल के साथ तैनात जवानों को मारा गया. इसमें उनके पिछले तीन से पांच साल की तैनाती की वजह से व्याप्त खामियों का फायदा उठाये जाने की बात सामने आई.

सरकार यह दावा करती है कि वह उग्रवादियों से मुकाबला करके उनके इलाकों में भी कानून का राज स्थापित करना चाहती है. लेकिन वे कुछ ऐसे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं जो अजीब हैं. इनमें युद्ध जैसी स्थिति, सैन्य अभियान, क्षेत्र पर प्रभाव और रोड ओपनिंग पार्टी शामिल हैं. जो लोग भी नक्सली अपराधों के आरोप में बस्तर के जेल में बंद आदिवासियों की मदद करने आते हैं, उन्हें पुलिस बुरी तरह परेशान करती है. चाहे वे वकील हों, पत्रकार हों या सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ता हों. बस्तर क्षेत्र में सरकार के पास तकरीबन 80,000 जवान हैं, जबकि नक्सलियों के पास पुरुष-महिला सब मिलाकर 4,000 लड़ाके हैं. दरअसल, बस्तर में जो चल रहा है, वह एक ऐसा युद्ध है जिसमें सरकार न सिर्फ नक्सलियों के खिलाफ लड़ रही है, बल्कि उन आम आदिवासियों पर भी बल प्रयोग कर रही है, जो नक्सलियों की मदद कर रहे हैं. कुल मिलाकर कहा जाए तो सरकार एक ऐसी लड़ाई अपने ही लोगों के खिलाफ लड़ रही है, जिसमें न तो कानून लागू होता है और न ही युद्ध के नियम.

अगर युद्ध राजनीति का अलग माध्यम से विस्तार है तो हमें यह पूछना पड़ेगा कि सरकार और माओवादी की वह राजनीति आखिर है क्या जिसके लिए यह लड़ाई लड़ी जा रही है? सरकार की ओर से कहा जा रहा है कि वह विकास करना चाहती है और माओवादी इसे रोकना चाहते हैं. विकास से सरकार का मतलब है जंगलों में सड़कें बनाना, स्कूल बनवाना, स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराना आदि. पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा था कि जंगलों को माओवादियों से मुक्त कराए बगैर खनन में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश नहीं आकर्षित किया जा सकता. लेकिन नरेंद्र मोदी सरकार उनसे भी एक कदम आगे चली गई है. सरकार ने 1908 के छोटानागपुर टेनेंसी कानून में बदलाव किया है. अब झारखंड के आदिवासियों को वह संरक्षण नहीं मिल पाएगा, जो पहले उपलब्ध था. मोदी सरकार ने वन अधिकार कानून, 2006 के तहत मिले सामुदायिक वन अधिकार को भी खत्म कर दिया है. सरकार ने निजी कंपनियों को उत्तरी छत्तीसगढ़ में खनन करने और इन अधिकारों का उल्लंघन करने की खुली छूट दे रखी है. लगतार हो रहे सड़क निर्माण से भी जंगलों का काफी नुकसान हो रहा है. पश्चिमी सिंहभूम के सारंडा में लौह अयस्क खनन ठीक से हो, इसलिए अर्द्धसैनिक बलों के 17 कैंप बनाए गए हैं.

इस तरह का विकास हमें कहां ले जा रहा है? निश्चित तौर पर हमें सुकमा की घटना पर गुस्सा व्यक्त करना चाहिए, क्योंकि अधिकांश जवान कामगार और गरीब परिवारों से आते हैं. यही पृष्ठभूमि उन लड़ाकों की भी है, जो मलकानगिरी में मारे गए थे. लेकिन जवान और लड़ाकों की प्रेरणा अलग-अलग होती है. जो जवान सीआरपीएफ में आता है, उसके पास जीवनयापन के लिए इससे अच्छा कोई और विकल्प नहीं है. जबकि नक्सल जवानों का पगार से कोई संबंध नहीं है. वे इस बात से प्रेरित होते हैं कि उन्हें अपनी जमीन और जंगल पर होने वाले कब्जे को रोकना है.

निश्चय ही हम लोगों में से अधिकांश लोग चाहते हैं कि यह युद्ध खत्म हो. लेकिन इसकी अंत की शुरुआत के लिए यह जरूरी है कि हम बस्तर या अन्य इलाकों के आदिवासियों के गुस्से की वजहों को समझें. हमें यह भी समझना होगा कि अपनी जमीन और जंगल बचाने के अभियान का नेतृत्व इन आदिवासियों ने माओवादियों को क्यों सौंप दिया? पूर्व केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश ने 2013 में दस सालों के लिए अनुसूचित क्षेत्र में खनन और उद्योग पर रोक लगाने को कहा था. संभवतः यह एक शुरुआत हो सकती है, जिसके जरिए उस सच्चाई का सामना भी शुरू होगा जिसे सरकार नजरंदाज करती आई है. ■

अगर युद्ध राजनीति का अलग माध्यम से विस्तार है, तो हमें यह पूछना पड़ेगा कि सरकार और माओवादी की वह राजनीति आखिर है क्या जिसके लिए यह लड़ाई लड़ी जा रही है? सरकार की ओर से कहा जा रहा है कि वह विकास करना चाहती है और माओवादी इसे रोकना चाहते हैं. विकास से सरकार का मतलब है जंगलों में सड़कें बनवाना, स्कूल बनवाना, स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराना आदि. पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा था कि जंगलों को माओवादियों से मुक्त कराए बगैर खनन में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश नहीं आकर्षित किया जा सकता. लेकिन नरेंद्र मोदी सरकार उनसे भी एक कदम आगे चली गई है. सरकार ने 1908 के छोटानागपुर टेनेंसी कानून में बदलाव किया है.

(लेखक इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली के संपादक हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

घोटालेबाज़ों को बचा रहा हाईकोर्ट और सीएम के आदेश का 'लोचा'

आरोपी ही करने लगा आरोप की जांच

- हाईकोर्ट ने कहा सरकार अपने स्तर से जांच कराए
- शासन भूला अपना स्तर, जांच फिसल गई कहीं और
- घोटाले के आरोपी प्रमुख सचिव ने ही लपक ली जांच
- मुख्यमंत्री योगी ने दोहरा दिया औपचारिक 'डायलॉग'
- विधानसभा अध्यक्ष दीक्षित ने साधा सुविचारित मौन
- माता प्रसाद पांडेय की धांधलियों पर सब डाल रहे पर्दा

प्रभात रंजन दीन

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने कहा कि पूर्ववर्ती सरकार के कार्यकाल में उत्तर प्रदेश विधानसभा सचिवालय में की गई नियुक्तियों में धांधली की जांच कराई जा रही है. मुख्यमंत्री ने 'चौथी दुनिया' से कहा कि अवैध नियुक्तियां रद्द की जाएंगी और दोषी पाए गए लोगों के खिलाफ कानून की प्रक्रिया के अनुरूप कार्रवाई होगी. उधर, इलाहाबाद हाईकोर्ट ने भी यूपी विधानसभा सचिवालय में हुई अवैध नियुक्तियों की जांच कराने का आदेश दिया है. यह दो सूचनाएं हैं, जो खबर की तरह सामने दिखती हैं, लेकिन इसके अंदर का जो 'लोचा' है, असली खबर वह है. सत्ता व्यवस्था को अपने चंगुल में जकड़े लोगों ने हाईकोर्ट और मुख्यमंत्री दोनों को अपनी सुविधा के मुताबिक फिरकी पर रख कर घुमा दिया. हाईकोर्ट का आदेश भी रह गया और मुख्यमंत्री की बात भी रह गई, और घोटालेबाजों ने अपने बचाव का मक्कार रास्ता भी निकाल लिया.

मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने सोमवार 29 मई 2017 को अपने एनेक्सी दफ्तर में 'चौथी दुनिया' से कहा कि विधानसभा सचिवालय में हुई नियुक्तियों में अनियमितता की जांच प्रमुख सचिव स्तर के अधिकारी से कराई जा रही है. उधर, इलाहाबाद हाईकोर्ट के न्यायाधीश अमरेश्वर प्रताप शाही और दयाशंकर त्रिपाठी ने 18 मई 2017 के अपने फैसले में स्पष्ट तौर पर कहा था कि उत्तर प्रदेश सरकार अपने स्तर पर विधानसभा सचिवालय में हुई नियुक्तियों में धांधली की शिकायतों की जांच करेगी. हाईकोर्ट के फैसले के दूसरे अंश में लिखा है कि राज्य सरकार और विधानसभा सचिवालय के प्रमुख सचिव (क्रमश: प्रतिवादी नंबर 1 व 2) शिकायतों की जांच करें और अगर जांच में शिकायतों की पुष्टि होती है, तब उस अनुरूप कानूनी कार्रवाई की जाएगी. बस, घपला करने वालों को इस मामले में 'लोचा' दिख गया. विधानसभा सचिवालय के प्रमुख सचिव प्रदीप दुबे (रेस्पॉन्डेंट नंबर-2) ने मामले को आनन-फानन में लपक लिया और नियुक्तियों में धांधली की जांच शुरू कर दी. राज्य सरकार (रेस्पॉन्डेंट नंबर-1) हक्का-बक्का रह गई. प्रदीप दुबे ने मौका ही नहीं दिया कि राज्य सरकार इस मामले में अपने स्तर से जांच शुरू करे, जबकि हाईकोर्ट ने साफ-साफ कहा था कि राज्य सरकार अपने स्तर पर जांच कराए. दुबे ने शासन से यह बताया भी नहीं कि नियुक्ति विवाद में वे खुद एक पक्ष हैं, लिहाजा जांच शासन स्तर पर किसी अन्य सक्षम अधिकारी से कराई जाए. खैर, नैतिकता का इतना ऊंचा स्तर ही होता, तो घोटाला क्यों होता! हाईकोर्ट का फैसला भी लोकतंत्र की मुख्यधारा जैसा ही है, जांच के लिए तो कहा लेकिन कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं की. जांच करते रहो अनवरत...

अब इस पूरे प्रकरण का एक और दुखद-हास्य देखिए. समाजवादी शासनकाल के विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय और विधानसभा सचिवालय के प्रमुख सचिव प्रदीप दुबे ने मिल कर सैकड़ों अवैध नियुक्तियां कीं. इस बारे में सरकार, राज्यपाल से लेकर विभिन्न अदालतों तक शिकायतें गईं. आम लोगों ने भी जाना कि नियुक्ति घोटाले के केंद्र में विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय और प्रमुख सचिव प्रदीप दुबे हैं. लेकिन यह भारतीय लोकतंत्र और न्यायतंत्र का असली रूप है कि घोटाले की जांच भी वही करेगा, जो घोटाला करने का आरोपी है. विचित्र किस्म का दिलचस्प तथ्य यह भी है कि नियुक्ति घोटाले के अभियुक्त प्रदीप दुबे रिटायर हो चुके, लेकिन 'सिस्टम' को तो ऐसे ही लोग पसंद हैं. सो, प्रदीप दुबे इस 15 अप्रैल को 60 साल की उम्र प्राप्त कर लेने के बाद भी विधानसभा सचिवालय के प्रमुख सचिव के पद पर विराजमान हैं, उसी जगह, जिस जगह विधानसभा अध्यक्ष की पीठ पर विद्वान और ईमानदार छवि के हृदय नारायण दीक्षित विराजमान हो चुके हैं. लेकिन 'यह सत्ता का गलियारा है, जरा संभल कर चलिए' के शाश्वत-संदेश की तरफ दीक्षित जी ने भी ध्यान नहीं दिया और न अपनी छवि का ही ध्यान रखा....और नियुक्ति-घोटाले की जांच घोटाले के आरोपी प्रदीप दुबे कर रहे हैं. विधायी पीठ पर कानून की धज्जियां खुलेआम उड़ रही हैं. विधानसभा सचिवालय में धांधली हुई और विधानसभा सचिवालय ही उस धांधली की जांच भी कर रहा है. यह विचित्र किंतु सत्य है. प्रमुख सचिव दुबे ने बाकायदा अपनी अध्यक्षता में जांच कमेटी गठित कर दी है और अपने मातहतों को जांच कमेटी में सदस्य बना डाला है. मातहत अपने आका के खिलाफ क्या जांचेंगे, उस जांच का आकलन जन-अदालत में तो अभी ही हो गया है. जांच कमेटी में विधानसभा सचिवालय के संयुक्त सचिव अमरेश सिंह श्रीनेत, उप सचिव राजेंद्र सिंह और अनुसचिव अशोक कुमार को सदस्य बनाया गया है. ऐसी भी सूचना है कि उप सचिव राजेंद्र सिंह ने विवादास्पद जांच कमेटी में शामिल होने से इन्कार कर दिया है. अब उनकी जगह किसी दलित अधिकारी को सदस्य बनाने का उपक्रम हो रहा है, जो दुबे के खास हैं. कमेटी के दो अन्य सदस्य भी दुबे की हां में हां मिलाने वाले लोग हैं. ऐसा लगता है कि मुख्यमंत्री और विधानसभा अध्यक्ष दोनों को अंधेरे में या भ्रम में रख कर जांच की औपचारिकता शुरू कर दी गई हो, या यह भी हो सकता है कि सत्ता और विधायी अलमबरदारों ने 'मूंदहुं आंख कतहुं कुछ नाहिं' का सूत्र-वाक्य धारण कर लिया हो. जांच का नतीजा आते ही लोगों के सामने सब साफ हो जाएगा.

अब एक बार फिर समाजवादी काल के विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय और दोनों काल में समायोजित विधानसभा के प्रमुख सचिव प्रदीप दुबे के कृत्यों का दर्शन करते चलें. पांडेय ने तो दुबे के साथ मिल कर विधानसभा सचिवालय को अपने रिश्तेदारों, इलाकाइयों और चाटुकारों का अड्डा बना दिया. पांडेय के साथ-साथ सपा के कई नेताओं और विधानसभा सचिवालय के अधिकारियों ने भी बहती गंगा में हाथ धोया. प्रदेश में विधानसभा चुनाव के लिए आचार संहिता लागू होने के बाद भी माता प्रसाद पांडेय ने विधानसभा सचिवालय में नियुक्तियां जारी रखीं. चुनाव परिणाम आने तक अपने लोगों को भर्ती करने का सिलसिला जारी रखा. इन अवैध नियुक्तियों के बारे में चुनाव आयोग से शिकायत भी की गई थी, लेकिन आयोग ने इसमें हाथ डालने से परहेज किया.

निवर्तमान विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय खुद भी इटवा विधानसभा (305) सीट से समाजवादी पार्टी के प्रत्याशी थे. उन पर आचार संहिता के पालन का दोहरा दायित्व था, इसे ताक पर रख कर वे विधानसभा सचिवालय में अपने नाते-रिश्तेदारों और पैरवी-पुत्रों की नियुक्ति करने में लगे थे. प्रदेश में चुनाव आचार संहिता चार जनवरी 2017 से लागू हो गई थी. आप विधानसभा सचिवालय के दस्तावेज खंगालें, तो पाएंगे कि आचार संहिता के दौरान खूब नियुक्तियां की गईं. आचार संहिता के बीच 12, 13, 16, 17, 18 और 27 जनवरी 2017 को विधानसभा के समीक्षा अधिकारियों और सहायक समीक्षा अधिकारियों की नियुक्तियां की गईं. इनसे सम्बंधित दस्तावेज 'चौथी दुनिया' के पास उपलब्ध हैं. आचार संहिता के दौरान विधानसभा सचिवालय में जिन समीक्षा अधिकारियों और सहायक समीक्षा अधिकारियों की नियुक्तियां की गईं, उनमें से कुछ नाम हम पाठकों की संतुष्टि के लिए छाप रहे हैं. इस फेहरिस्त में उपेंद्रनाथ मिश्र, रुद्र प्रताप यादव, नरेंद्र कुमार यादव, मान बहादुर यादव, रजनीकांत दुबे, राकेश कुमार साहनी, वरुण दुबे, रवींद्र कुमार दुबे, भास्करमणि त्रिपाठी, वीरेंद्र कुमार पांडेय, जय प्रकाश पांडेय, आदित्य दुबे, नवीन चतुर्वेदी, प्रवेश कुमार मिश्र, मनीराम यादव, दुर्गेश प्रताप सिंह, सुधीर कुमार यादव, संदीप कुमार दुबे, राजेश कुमार सिंह, राकेश कुमार सिंह, सुनील सिंह, विजय कुमार यादव, विवेक कुमार यादव, अमिताभ पाठक, राहुल त्यागी, अविनाश चतुर्वेदी, पुनीत दुबे, शलभ दुबे, प्रशांत राय शर्मा, आदित्य कुमार द्विवेदी, श्रेयांश प्रताप मिश्र, काली प्रसाद, विपिन वर्मा, सोनी कुमार पांडेय, संजीव कुमार सिंह, सिद्धार्थ धर्मराजन, चंद्रेश कुमार पांडेय, सतीश कुमार सिंह, कीर्ति प्रधान, शिशिर रंजन, वरुण सिंह, पीयुष दुबे, अरविंद कुमार पांडेय, औरंगजेब आलम, सलमान, करुणा शंकर पांडेय, दिलीप कुमार पाठक, प्रवीण कुमार सिंह, भूपेंद्र सिंह, सुष्मिता गुप्ता, अभिषेक कुमार सिंह, अंकिता द्विवेदी, हिमांशु श्रीवास्तव, पार्थ सारथी पांडेय, प्रशांत कुमार शर्मा, राहुल त्यागी और हरिशंकर यादव के नाम शामिल हैं. इनमें से अधिकतर लोग माता प्रसाद पांडेय के विधानसभा क्षेत्र के रहने वाले, उनके या उनके करीबी नेताओं के रिश्तेदार या उनके जिले के रहने वाले समर्थक हैं. माता प्रसाद पांडेय ने नियुक्तियों को और पुख्ता करने के लिए कुछ अन्य दस्तावेजी खुराफात भी किए, जिसमें विधानसभा के प्रमुख सचिव प्रदीप कुमार दुबे और विशेष सचिव प्रमोद कुमार जोशी खास तौर पर उनका साथ देते रहे. 27 फरवरी 2017 को माता प्रसाद पांडेय ने विधानसभा सत्र में ओवरटाइम काम करने वाले 652 अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए 50 लाख रुपए का अतिरिक्त मानदेय मंजूर किया और बड़ी चालाकी से उस लिस्ट में उन लोगों के नाम भी घुसेड़ दिए, जिनकी नियुक्ति ही चुनाव आचार संहिता लागू होने के बाद की गई थी.

उल्लेखनीय है कि विधानसभा सचिवालय में समीक्षा अधिकारियों और सहायक समीक्षा अधिकारियों की नियुक्ति के लिए 12 जून 2015 को विज्ञापन प्रकाशित किया गया था. इसमें करीब 75 हजार अभ्यर्थियों ने आवेदन भरा था. विधानसभा ने उनसे फीस के बतौर कुल तीन करोड़ रुपए वसूले थे. नियुक्ति के लिए परीक्षा कराने का जिम्मा टाटा कंसल्टेंसी सर्विस (टीसीएस) को दिया गया था. इसके लिए टीसीएस को एक करोड़ 52 लाख 33 हजार 700 रुपए फीस के बतौर दिए गए. (शेष पृष्ठ 11 पर)

बंसल जी के 'अनमोल' वचन...

आपको यह भी बता दें कि प्रदेश सत्ता के सूत्रधार भाजपा के संगठन मंत्री सुनील बंसल ने भी पिछले दिनों एक मुलाकात के दौरान 'चौथी दुनिया' से कहा कि उन्होंने विधानसभा सचिवालय में की गई नियुवितयों में धांधली को उजागर करने वाली खबरें 'चौथी दुनिया' के कई अंकों में देखी हैं. यह मामला अत्यंत गंभीर है. इस मसले पर वे मुख्यमंत्री और नए विधानसभा अध्यक्ष हृदय नारायण दीक्षित से बात करेंगे. बंसल ने अपने पास 'चौथी दुनिया' की कुछ प्रतियां भी रखीं और इस संवाददाता से कहा कि वे आज ही मुख्यमंत्री से मिलने जा रहे हैं और यह मुद्दा उनके समक्ष रखेंगे. बंसल जी ने यह मुद्दा मुख्यमंत्री और विधानसभा अध्यक्ष के समक्ष रखा या नहीं, इस बारे में उनसे दोबारा तो बात नहीं हुई, लेकिन जिस तरह के नतीजे सामने दिख रहे हैं, उससे नहीं लगता कि बंसल जी ने मुख्यमंत्री या विधानसभा अध्यक्ष से इस मसले पर कोई बात की. बंसल जी का आश्वासन भी उनका राजनीतिक यानि, असत्य-वचन ही समझिए. ■

चौथी दुनिया
उत्तर प्रदेश विधानसभा में चल रहा अवैध नियुक्तियों का सिलसिला
विधानसभा भी काली
माता प्रसाद पांडेय का लंबित-लक्ष्य समीक्षा अधिकारियों की भर्ती करके मानेंगे

विधानसभा में अवैध नियुवितयों को लेकर 'चौथी दुनिया' ने 10 महीने पहले ही कवर स्टोरी प्रकाशित की थी.

आरोपी ही करने लगा आरोप की जांच

पृष्ठ 10 का शेष

टीसीएस ने 29/30 दिसम्बर 2015 को 11 जिलों में बनाए गए केंद्रों पर ऑनलाइन परीक्षा ली. इस परीक्षा के रिजल्ट की लोगों को प्रतीक्षा थी. लेकिन सात महीने के इंतजार के बाद अभ्यर्थियों को पता चला कि वह परीक्षा तो विधानसभा अध्यक्ष द्वारा रद्द की जा चुकी है. 27 जुलाई 2016 को विधानसभा के नोटिफिकेशन के जरिए विशेष सचिव प्रमोद कुमार जोशी ने टीसीएस की ऑनलाइन परीक्षा रद्द किए जाने और दोबारा परीक्षा में शामिल होने के लिए उन्हीं अभ्यर्थियों से फिर आवेदन दाखिल करने का फरमान जारी किया. परीक्षा रद्द करने का कोई कारण भी नहीं बताया. इस अधिसूचना में यह बात भी गोल कर दी गई कि अब कौन सी कंपनी परीक्षा कराएगी. देश-प्रदेश से आवेदन करने वाले अभ्यर्थियों में भगदड़ जैसी स्थिति बन गई. हजारों अभ्यर्थियों को तो दोबारा परीक्षा की जानकारी भी नहीं मिल पाई. उनकी फीस का पैसा डूब गया. परीक्षा रद्द होने और उसे दोबारा आयोजित करने के बारे में नियमतः विज्ञापन प्रकाशित कराया जाना चाहिए था, लेकिन विधानसभा ने ऐसा नहीं किया. कहीं कोई पारदर्शिता नहीं. दोबारा परीक्षा देने के लिए 60 हजार अभ्यर्थी ही आवेदन दाखिल कर पाए. अभ्यर्थी और उनके अभिभावक परेशान और बेचैन थे, लेकिन विधानसभा के अंदर षडयंत्र का खेल बड़ी तसल्ली से खेला जा रहा था. इस बार परीक्षा कराने का ठेका गुपचुप तरीके से 'ऐपटेक' को दे दिया गया. इस बार महज छह जिलों में बनाए गए केंद्रों पर ऑफलाइन परीक्षा कराई गई. इसमें ओएमआर शीट पर जवाब के खानों में पेंसिलें घिसवाई गईं, ताकि आसानी से हेराफेरी की जा सके.

ऐसा ही हुआ. करीब 60 समीक्षा अधिकारियों (आरओ) और 80 सहायक समीक्षा अधिकारियों (एआरओ) की ऐसे समय नियुक्तियां की गईं, जब उत्तर प्रदेश में चुनाव आचार संहिता लागू थी. ऐसे भी लोगों को नियुक्त किया गया, जो परीक्षा में पास नहीं थे और निर्धारित उम्र सीमा से काफी ऊपर के थे. माता प्रसाद पांडेय को आभास था कि चुनाव परिणाम आने के बाद प्रदेश में समाजवादी पार्टी की सरकार नहीं बचेगी. विधानसभा सचिवालय के प्रमुख सचिव प्रदीप कुमार दुबे 30 अप्रैल 2017 को रिटायर होने वाले थे. लिहाजा, बहती गंगा में हाथ धोते हुए 25-30 सहायक समीक्षा अधिकारियों की भी भर्ती कर ली गई. इसके लिए विधानसभा सचिवालय ने विज्ञापन प्रकाशित करने के नियम का पालन करना उचित नहीं समझा. इन नियुक्तियों में ऐसे लोग भी शामिल हैं, जो शैक्षिक रूप से अयोग्य हैं और निर्धारित उम्र से बहुत अधिक उम्र के हैं. चपरासी की नियुक्ति का विज्ञापन एक सांध्य अखबार में प्रकाशित कराया गया और इसमें माता प्रसाद पांडेय ने अपने क्षेत्र के लोगों को भर दिया. अनाप-शनाप तरीके से पदोन्नतियां भी दी गईं. सपा नेता रामगोपाल यादव के करीबी बताए जाने वाले रमेश कुमार तिवारी को विधानसभा पुस्तकालय में विशेष कार्य अधिकारी (शोध) के पद पर बिना किसी चयन प्रकिया का पालन किए नियुक्त कर दिया. इसी तरह रिटायर हो चुके रामचंद्र मिश्र को फिर से ओसएसडी बना कर ले आया गया. इस तरह की कई बानगियां हैं. विचित्र किंतु सत्य यह भी है कि जिन 40 समीक्षा अधिकारियों की नियुक्ति वर्ष 2005 में हुई थी, उन्हें नियमित नहीं किया गया और वर्ष 2007 के चुनाव के समय आचार संहिता लागू होने के दरम्यान ही उन्हें निकाल बाहर किया. तब भी विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय ही थे. वर्ष 2011 में उन्हीं में से कुछ पैरवी-पुत्रों को फिर से नियमित कर दिया गया और बाकी लोगों को सड़क पर धक्के खाने के लिए छोड़ दिया गया.

अप्रैल 2017 में 'चौथी दुनिया' ने विधानसभा में अवैध नियुक्तियों की दूसरी खेप प्रकाशित की

विधानसभा नियुक्ति घोटाले के दो चेहरे : एक पूर्व, एक वर्तमान
पूर्व अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय और यथावत प्रमुख सचिव प्रदीप दुबे

माता प्रसाद पांडेय को चुनाव आचार संहिता के दरम्यान ही नापंसद अधिकारियों को नौकरी से बाहर निकालने और आचार संहिता की अवधि में ही अपने पसंदीदा लोगों को नौकरी देने में विशेषज्ञता हासिल है.

माता प्रसाद पांडेय के दो दामादों और पूर्व विधानसभा अध्यक्ष सुखदेव राजभर के दामाद की अवैध नियुक्तियों से विधानसभा का मजाक पहले ही उड़ चुका है. पांडेय ने अपने दो दामादों प्रदीप कुमार पांडेय और नरेंद्र शंकर पांडेय को सारे कानून ताक पर रख कर नियुक्त किया था. बड़े दामाद प्रदीप कुमार पांडेय 22 मार्च 2013 को विधानसभा में संपादक के पद पर और छोटे दामाद नरेंद्र शंकर पांडेय 12 मई 2015 को ओएसडी के पद कर नियुक्त किए गए थे. इसी तरह बसपा के शासनकाल में विधानसभा अध्यक्ष रहे सुखदेव राजभर ने भी अपने दामाद राजेश कुमार को विधानसभा सचिवालय में शोध और संदर्भ अधिकारी के पद पर बिना न्यूनतम योग्यता (अर्हता) और बिना प्रक्रिया का पालन किए हुए नियुक्त कर दिया था. माता प्रसाद पांडेय ने नियुक्तियों के लिए विधानसभा की नियमावली की उन धाराओं को भी संशोधित कर दिया, जिसे संशोधित करने का अधिकार विधानसभा अध्यक्ष को है ही नहीं. विधानसभा में सूचनाधिकारी कर्मेश प्रताप सिंह की अवैध नियुक्ति के प्रसंग में इस संशोधन का भांडा फूटा. लेकिन तब तक पांडेय सूचनाधिकारी की नियुक्ति कर चुके थे.

हाईकोर्ट के आदेश पर भी एक निगाह

विधायी पीठ के अंदर पीठाधीश और पीठाधिकारी द्वारा विधानसभा सचिवालय में की गई नियुक्तियों में घोर धांधली और भ्रष्टाचार जैसे गंभीर मामले में इलाहाबाद हाईकोर्ट की तरफ से क्या फैसला आता है, इस पर निगाह डालना और निगाह रखना दोनों ही आवश्यक है. इलाहाबाद हाईकोर्ट में दीपक कुमार राय और 18 अन्य द्वारा दाखिल याचिका (संख्या- 20423/2017) पर न्यायाधीश अमरेश्वर प्रताप शाही और दयाशंकर त्रिपाठी ने 18 मई 2017 को फैसला दिया...

'हम लोगों ने याचिकाकर्ता की तरफ से वकील समीर श्रीवास्तव और प्रतिवादी की तरफ से अतिरिक्त महाधिवक्ता नीरज त्रिपाठी को सुना. याचिका में आरोप है कि विधानसभा सचिवालय में नियमों, योग्यता और निर्धारित आयु के प्रावधानों को ताक पर रख कर नियुक्तियां की गईं. राज्य सरकार द्वारा किसी सक्षम पदाधिकारी से इस मामले की जांच कराए जाने की आवश्यकता है. इस मत के साथ हम इस याचिका को निस्तारित करते हैं और प्रतिवादी नंबर-एक और प्रतिवादी नंबर-दो को यह निर्देश देते हैं कि याचिकाकर्ताओं की शिकायतों की जांच करे और अगर इसमें कोई अनियमितता पाई जाती है, जो संज्ञान लेने लायक होगी, तब वादी के लिए आगे की कार्रवाई का रास्ता खुल सकेगा, लेकिन चयनित उम्मीदवारों को पहले इस बारे में सूचित करना होगा.' ■

This writ petition has been filed on behalf of 19 petitioners who were unsuccessful in the Review Officers examination / Assistant Review Officers examination held for selections on the said posts by the Secretariat of the U.P. Legislative Assembly.

We have heard the learned counsel for the petitioner Sri Sameer Srivastava and Sri Neeraj Tripathi, learned Additional Advocate General for the State.

The allegations made in the writ petition are about various irregularities including the selection of candidates who are either under-age or have been selected without following the due procedure prescribed under the rules.

This may require an inquiry to be conducted by the State Government itself by the competent authority.

In view of this we dispose of this writ petition with a direction to the respondents no. 1 and 2 to examine the grievance of the petitioners and in the event any such discrepancy, as alleged, is decipherable then it shall be open for the respondents to take action in the matter but only after putting to notice the selected candidates.

The writ petition is disposed of with the said observations.

AUTHENTICATED COPY

जब शनिवार को सचिवालय खुलवा कर गायब की गई फाइलें!

22 अप्रैल को शनिवार का दिन था. सरकारी दफ्तर बंद थे. अचानक विधानसभा सचिवालय का दफ्तर खोला गया. प्रमुख सचिव प्रदीप कुमार दुबे के कुछ खास अधिकारी-कर्मचारी फाइलें और दस्तावेज टटोलते दिखे. शनिवार को दफ्तर खोलने का आदेश किसने जारी किया और क्यों जारी किया, इसका आधिकारिक स्पष्टीकरण अब तक सामने नहीं आया. शनिवार को विधानसभा सचिवालय का दफ्तर खुलवा कर कुछ दस्तावेज गायब करने की खबर उड़ी और ट्वीटर से लेकर फेसबुक और सोशल मीडिया के दूसरे माध्यमों से यह खबर चर्चा में आ गई. विधानसभा सचिवालय नियुक्ति-घोटाले के शिकार कुछ बच्चों ने इस संवाददाता को भी फोन पर यह सूचना दी. इस संवाददाता ने भी ट्वीटर पर यह सूचना प्रसारित की. इसके बावजूद विधानसभा सचिवालय की ओर से कोई सार्वजनिक स्पष्टीकरण जारी नहीं किया गया. इस मौन को स्वीकारोक्ति के बतौर माना जा रहा है. ■

माता प्रसाद पांडेय ने विधानसभा सचिवालय में समीक्षा अधिकारियों और सहायक समीक्षा अधिकारियों की भर्ती का लक्ष्य 2006 से ही साध रखा था. उस समय भी मुलायम के शासनकाल में माता प्रसाद पांडेय ही विधानसभा अध्यक्ष थे और उन्होंने 50 समीक्षा अधिकारियों और 90 सहायक समीक्षा अधिकारियों की नियुक्ति के लिए 12 मार्च 2006 को परीक्षा कराई थी. नियुक्तियों में विलंब हुआ और 2007 में सत्ता बदल गई. बसपा सरकार ने आते ही सारी परीक्षाएं रद्द कर दी थीं. बसपा काल में विधानसभा अध्यक्ष रहे सुखदेव राजभर ने समीक्षा अधिकारियों की नियुक्ति के लिए 14 अप्रैल 2011 में फिर से परीक्षा कराई. बसपाई विधानसभा अध्यक्ष ने वह परीक्षा उत्तर प्रदेश टेक्निक्ल युनिवर्सिटी (यूपीटीयू) से कराई. इसमें 48 लाख 50 हजार रुपए खर्च हुए. उस खर्च का हिसाब आज तक वित्त विभाग के पास जमा नहीं किया गया है. खैर, 2012 में फिर सत्ता बदली, माता प्रसाद पांडेय फिर विधानसभा अध्यक्ष बन गए. पांडेय ने फिर बसपा काल की परीक्षा रद्द कर दी. उसे टीसीएस से कराया. फिर रद्द कर दिया. फिर 'ऐपटेक' से कराया और सत्ता जाने के ऐन पहले अपनी मर्जी की भर्तियां कर डालीं, आचार संहिता का भी ध्यान नहीं रखा. माता प्रसाद पांडेय ने अपने कार्यकाल में विधानसभा सचिवालय में जितनी भी नियुक्तियां कीं, उनमें से कौन उनके रिश्तेदार हैं, कौन उनके विधानसभा क्षेत्र के हैं, कौन उनके जिले के नजदीकी हैं, कौन किस नेता के सगे हैं और कौन विधानसभा के किस अधिकारी के नातेदार हैं, इसका भी हम आगे विस्तार से खुलासा करेंगे.

अभी 18 मई 2017 को इलाहाबाद हाईकोर्ट में दाखिल जिस याचिका पर फैसला आया है, उस याचिका में ऐसे कम से कम आधा दर्जन लोगों की लिस्ट संलग्न की गई थी, जिनके नाम सफल उम्मीदवारों की सूची में नहीं होने के बावजूद उन लोगों का चयन कर लिया गया. इस याचिका के जरिए भी हाईकोर्ट को यह जानकारी दी गई कि चयनित उम्मीदवारों में से दर्जनभर से अधिक उम्मीदवार तो एक ही जिले सिद्धार्थनगर के इटवा तहसील के हैं और समाजवादी पार्टी के वरिष्ठ नेता से जुड़े हैं. 'चौथी दुनिया' पहले ही यह उजागर कर चुका है कि विधानसभा में नौकरी के लिए चुने गए सारे 'योग्य' लोग निवर्तमान विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय के करीबी हैं और पांडेय के गृह जनपद सिद्धार्थनगर जिले की इटवा तहसील से हैं. हाईकोर्ट को यह जानकारी दी गई कि महज चार दिनों में आनन-फानन में एक हजार 113 उम्मीदवारों के इंटरव्यू कराए गए. यानि, एक दिन में 278 उम्मीदवारों का इंटरव्यू निपटाया गया. अंतिम सूची में सफल उम्मीदवारों के अंक और जाति के विवरण का भी खुलासा नहीं किया गया. इसमें से एक उम्मीदवार की उम्र फॉर्म भरते समय केवल 19 साल थी, लिहाजा वह परीक्षा में शामिल होने के लिए भी पात्र नहीं था, लेकिन उसका भी चयन कर लिया गया. निर्धारित उम्र सीमा से कम उम्र के लड़कों की नियुक्ति करने में प्रदीप दुबे पुराने विशेषज्ञ हैं. बसपा के शासनकाल में जब सुखदेव राजभर विधानसभा अध्यक्ष हुआ करते थे, तब भी निर्धारित उम्र से कम के पैरवी-पुत्र नीरज अवस्थी को सहायक समीक्षा अधिकारी के पद पर नियुक्त कर लिया गया. इस नियुक्ति पर आधिकारिक विरोध दर्ज करने वाले एक उप सचिव की फाइल दुबे ने गायब कर दी. विधानसभा सचिवालय के पुराने कर्मचारी कहते हैं कि वरिष्ठ आईएएस विजय शंकर पांडेय का भतीजा भी उक्त पद के लिए अभ्यर्थी था. उसके दस्तावेज फाइल से गायब करा दिए गए, जिस वजह से वह साक्षात्कार में शामिल नहीं हो सका था.

समाजवादी शासनकाल में तत्कालीन विधानसभा अध्यक्ष माता प्रसाद पांडेय के निर्देश पर विधानसभा सचिवालय में 47 समीक्षा अधिकारी और 60 सहायक समीक्षा अधिकारियों की भर्ती का विज्ञापन निकाला गया था. 18 अक्टूबर 2016 को इसका परिणाम घोषित किया गया. लिखित परीक्षा में सफल अभ्यर्थियों के साक्षात्कार के लिए चार पैनल बनाए गए. कुल 1113 लोगों का साक्षात्कार लिया गया. चयन परिणाम जारी होने पर पता चला कि कई अयोग्य अभ्यर्थियों का चयन कर लिया गया. इनमें कई लोग पूर्व विधानसभा अध्यक्ष के नजदीकी और रिश्तेदार हैं. ऐसे लोगों को भी नियुक्ति दे दी गई, जिनका नाम अंतिम चयन सूची में शामिल नहीं था. एक अभ्यर्थी सौरभ सिंह की आयु 19 वर्ष है, जबकि चयन में न्यूनतम आयु 21 वर्ष होनी चाहिए. 18 अक्टूबर 2016 को परिणाम घोषित होने के 24 घंटे के भीतर ही कई लोगों की ताबड़तोड़ ज्वाइनिंग करा दी गई. आरक्षण नियमों की भी अनदेखी की गई. अकेले सिद्धार्थनगर से 13 लोगों की नियुक्ति की गई. याचिका में 45 चयनित अभ्यर्थियों को भी पक्षकार बनाया गया है. याचिकाकर्ताओं ने विधानसभा सचिवालय में हुई भर्ती-घोटाले से जुड़े कई दस्तावेज हाईकोर्ट को दिए, इनमें माता प्रसाद पांडेय के रिश्तेदारों को नौकरी देने के साक्ष्य भी शामिल हैं. इसके बावजूद हाईकोर्ट ने मामले की जांच के लिए कोई समय निर्धारित नहीं किया, न सरकार से न विधानसभा सचिवालय से इस सिलसिले में कोई रिपोर्ट तलब की और न जांच के लिए किसी निष्पक्ष एजेंसी को जिम्मा देने का ही राज्य सरकार को कोई निर्देश दिया. ■

feedback@chauthiduniya.com

सत्याग्रह की भूमि पर श्रमिकों का आत्मदाह

व्यवस्था परिवर्तन के लिए रचनात्मक और सामाजिक पहल ज़रूरी : गोविन्दाचार्य

राकेश कुमार

चम्पारण महात्मा गांधी के सत्याग्रह की धरती है. सत्याग्रह के सौ वर्षों बाद और आजादी के सत्तर वर्षों बाद भी अगर चम्पारण में मजदूरों को आत्मदाह करना पड़ता है तो यह चिन्ता और चिन्तन का विषय है. ऐसे में यह आकलन करना आवश्यक है कि इन सौ वर्षों में हमने क्या खोया, क्या पाया! उक्त उद्गार हैं थिंक टैंक माने जाने वाले प्रख्यात चिंतक और समाजसेवी केएन गोविन्दाचार्य के. चीनी मिल के दो श्रमिकों द्वारा आत्मदाह की घटना से द्रवित होकर श्री गोविन्दाचार्य दस दिनों के प्रवास पर मोतिहारी आए थे.

बापू के चम्पारण सत्याग्रह के सौ वर्ष पूरे होने पर केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा सत्याग्रह शताब्दी वर्ष मनाया जा रहा है. इस दौरान कई कार्यक्रम आयोजित किए गए. कई आयोजन होने वाले हैं. इस दौरान कितने ही केन्द्रीय मंत्री, राज्य सरकार के मंत्री और स्वयं मुख्यमंत्री मोतिहारी आए, लेकिन किसी ने इस ओर ध्यान नहीं दिया कि सत्याग्रह की प्रथम प्रयोग स्थली पर श्रमिकों को आत्मदाह क्यों करना पड़ रहा है. बकौल गोविन्दाचार्य दिल्ली के एक अखबार में यह समाचार पढ़कर वे अपनी वेदना रोक नहीं पाए. आत्मदाह क्यों, किसी ने रोका क्यों नहीं, घटना के बाद सरकारी स्तर पर क्या हुआ, आत्मदाह करने वालों के परिवार को क्या मिला, सत्याग्रह की धरती पर इतनी संवेदनहीनता का माहौल क्यों, कुछ ऐसे ही प्रश्नों का उत्तर खोजने के लिए गोविन्दाचार्य मोतिहारी पहुंचे हैं. बापू ने चम्पारण के किसान-मजदूरों की दुर्दशा देख कर उससे त्राण दिलाने के लिए सत्याग्रह का शंखनाद किया था, फिर महात्मा गांधी के चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष पर ऐसी घटना निश्चय ही चिन्तन का विषय है. क्या अब सत्याग्रह का कोई नया स्वरूप खोजना होगा? लोकतांत्रिक तरीके से समस्याओं के समाधान का कौन सा नया स्वरूप हो सकता है.

गोविन्दाचार्य गांव-गांव जाकर किसानों-मजदूरों से मिले और उनकी व्यथा से रूबरू हुए. इस दौरान लोगों की परेशानियों को समझा. उन्होंने चीनी मिल जाकर श्रमिकों से भी बात की. वे आत्मदाह करने वाले श्रमिक नेता नरेश श्रीवास्तव और सूरज बैठा के परिजनों से भी मिले. एक जनसुनवाई के दौरान गंभीरता से समस्याओं की जानकारी ली. एक खास भेंट में उन्होंने जो बताया, वह पूरी व्यवस्था को कठघरे में खड़े कर देती है. उन्होंने बताया कि पूरी जानकारी के बाद यह स्पष्ट हो गया कि दोनों श्रमिक नेता योगक्षेमं वहाम्यहं के इिश आन्दोलन कर रहे थे. वे वास्तविक मजदूर नेता थे, जो अपने साथियों के हक और मिल को पुनः चालू कराने के लिए सत्याग्रह कर रहे थे. घटना के बाद पुलिस के बर्बरतापूर्ण रवैये से स्पष्ट है कि पुलिस पूरी तरह संवेदनहीन है. कोई बोलने की हिम्मत नहीं कर रहा है. निर्दोषों को जेल में डाल दिया गया है, जिससे अन्य लोगों में दहशत का माहौल है. प्रशासन की भूमिका भी संवेदनहीन रही है. राज्य सरकार ने भी इसे गंभीरता से नहीं लिया. उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि इतनी बड़ी घटना होने के बाद भी सरकार ने यह जानने का प्रयास नहीं किया कि क्यों श्रमिकों के आत्मदाह की नौबत आई? उल्टे निर्दोषों को जेल में डालकर भय का माहौल बना दिया गया. गोविन्दाचार्य ने कहा कि पूरे तथ्यों की जानकारी के बाद एक रिपोर्ट बनाकर राज्य सरकार को दी जाएगी. राज्यपाल और मुख्यमंत्री से वार्ता होगी. सरकार से दोनों पीड़ित परिवारों को मुआवजा देने और श्रमिकों-किसानों के बकाया भुगतान के अलावा मिल चालू करने के लिए कहा जाएगा. वहीं केन्द्र सरकार को भी तथ्यों के आधार पर आवश्यक कार्रवाई करने के लिए कहा जाएगा. सरकार को उनके किए वादे याद दिलाए जाएंगे ताकि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के चीनी मिल के चीनी की चाय पीने की इच्छा पूरी की जा सके. यहां उल्लेखनीय है कि लोकसभा चुनाव के दौरान चुनावी सभा को सम्बोधित करते हुए नरेन्द्र मोदी ने कहा था कि अगर भाजपा जीत कर आती है तो चीनी मिल को शुरू कराया जाएगा और अगली बार आऊंगा, तब इसी चीनी मिल के चीनी की चाय पिऊंगा.

गांधी जी का मानना था कि अहिंसक और शांतिपूर्ण आन्दोलन से ही सफलता मिल सकती है. आन्दोलन में हिंसा का पुट आने से शोषणकर्ताओं को प्रताड़ित करने का मौका मिल जाता है और आन्दोलन धाराशायी हो जाता है. गोविन्दाचार्य ने कहा कि समूचे घटनाक्रम से यह स्पष्ट है कि बापू के सत्याग्रह को एक तरह से नकार दिया गया, ऐसे में लोकतांत्रिक तरीके से आन्दोलन का विकल्प क्या होगा?

गोविन्दाचार्य क्षेत्र के सामाजिक और आर्थिक हालात को देखकर चिंतित नजर आए. उन्होंने कहा कि सत्याग्रह के सौ वर्षों बाद भी बापू के बताए गए रास्ते और उनकी नीतियों को नजरअंदाज किया जा रहा है. शिक्षा को विशेष महत्व देते हुए महात्मा गांधी ने चम्पारण में बुनियादी विद्यालय की स्थापना की थी. स्वयं उन्होंने और कस्तूरबा गांधी ने विद्यालय का संचालन किया था, लेकिन अब कुछ बुनियादी विद्यालय ही बचे हैं. कुछ विद्यालयों में कमरे और शौचालय तो बना दिए गए, पर बुनियादी विद्यालय की पद्धति मूल शिक्षा नीति नहीं बन पाई. गांधी जी के बुनियादी विद्यालय का मूलमंत्र था शिक्षा के साथ रोजगार के लिए कौशल निर्माण, लेकिन वर्तमान सरकार ने गांधी की शिक्षा नीति को सिरे से खारिज कर दिया है. इस दौरान कई नियोजित शिक्षकों से भी उन्होंने मुलाकात की. शिक्षकों ने उन्हें बताया कि विगत पांच माह से वेतन नहीं मिला है. भूखमरी की स्थिति है. उन्होंने प्रश्न किया कि क्या ऐसी स्थिति विधायकों और पदाधिकारियों के साथ होती है! ऐसी स्थिति में शिक्षा के माहौल और उसकी गुणवत्ता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है. उन्होंने कहा कि यह स्थिति केवल शिक्षकों की नहीं, बल्कि अन्य क्षेत्रों में सेवा दे रहे कर्मियों की भी है. उन्होंने कहा कि जबतक सबको समान रूप से न्याय नहीं मिलेगा, तबतक व्यवस्था परिवर्तन नहीं हो सकता. बापू ने भी न्याय की मांग को लेकर ही सत्याग्रह किया था.

गोविन्दाचार्य तब और अब की समीक्षा में लगे हैं. आजादी के पूर्व 1911 ईस्वी में सेन्सेक्स हुआ था, तब और 2011 के सेन्सेक्स अर्थात अब की सामाजिक आर्थिक स्थिति के तुलनात्मक अध्ययन में वे इन दिनों जुटे हैं. दस दिनों के प्रवास के दौरान जो तथ्य उनके सामने आए, उसके आधार पर उनका मत है कि समाज पहले से काफी कमजोर हुआ है. किसानों-श्रमिकों की स्थिति पूर्ववत है. तब अंग्रेजों के अत्याचार से किसान-मजदूर त्रस्त थे और अब व्यवस्था के चक्रव्यूह में फंसकर आत्महत्या करने को मजबूर हैं. गोविन्दाचार्य ने कहा कि वे लगातार चम्पारण आते रहेंगे. पूरे आकलन के बाद सरकार को तथ्यों से अवगत कराएंगे, वहीं मजदूरों-किसानों की स्थिति में सुधार के लिए स्वयं तात्कालिक और दीर्घकालिक कार्यक्रम चलाएंगे. उन्होंने कहा कि ग्रामीण समाज के विकास के लिए कम खर्च में बहुआयामी खेती पर जोर दिया जाएगा. भारत कृषि प्रधान देश है, किसान को सम्पन्न और कृषि को उन्नत बनाये बिना भारत के सम्पूर्ण विकास की कल्पना नहीं की जा सकती. भारत स्वाभिमान आन्दोलन के प्रणेता गोविन्दाचार्य देश के कई हिस्सों में किसान और कृषि की समृद्धि के लिए काम कर रहे हैं. उनका मानना है कि केवल सरकार पर निर्भर रह कर परिवर्तन की बात नहीं सोची जा सकती है.

चीनी मिल के दो मजदूरों के आत्मदाह की घटना के बाद आन्दोलन ने व्यापक रूप ले लिया है. स्वामी अग्निवेश, जन अधिकार पार्टी प्रमुख सांसद पप्पू यादव ने भी एक मंच से गैर राजनीतिक आन्दोलन का शंखनाद किया था. वहीं झारखण्ड के भूतपूर्व आईजी पीके सिद्धार्थ ने सामाजिक जागरूकता और पीड़ित परिवार और मजदूरों के कल्याणार्थ कार्य शुरू किया है. इस आन्दोलन की धमक अब दिल्ली में भी दिखने लगी है. ऐसे में उम्मीद है कि गोविन्दाचार्य के आने के बाद निश्चय ही आन्दोलन को एक नया आयाम मिलेगा.■

feedback@chauthiduniya.com

विकास पर लेवी की मार

सुनील सौरभ

बिहार में नक्सली अपने प्रभाव क्षेत्र वाले इलाकों में सुरक्षा बलों को पैठ नहीं जमाने देना चाहते हैं, इसके अलावा विकास परियोजनाओं से लेवी वसूलकर इसे बाधित कर रहे हैं. क्षेत्र के पुल-पुलिया, सड़क निर्माण पर भी नक्सली रोक लगा रहे हैं, क्योंकि इन क्षेत्रों में अगर सड़कें बनीं, तब आम लोगों के साथ-साथ सुरक्षा बलों की भी आवाजाही तेज हो जाएगी. यदि किसी एक संगठन ने ठेका लेने वाली कम्पनी से लेवी वसूल किया, तब दूसरे नक्सली संगठन भी ठेकेदार को घेर लेते हैं. इसी तरह एक ठेकेदार से कई नक्सली संगठन लेवी वसूलने में लग जाते हैं. इसका नतीजा यह होता है कि लाचार होकर ठेकेदार काम छोड़ देता है. 15 मई 2017 की रात को गया जिले के परैंया थाना क्षेत्र के कपसिया गांव के समीप मोरहर नदी पर दो पुलों के निर्माण कार्य में लगे ठेका कम्पनी के बेस कैम्प पर नक्सलियों ने हमला बोल दिया. हथियार बंद नक्सली सैप जवान की वर्दी पहनकर बेस कैंप में घुस गए थे और चार मजदूरों को अपने साथ ले गए. नक्सलियों ने लेवी नहीं देने तक काम बंद करने की चेतावनी दी. तीन दिनों बाद शेष दो मजदूरों को छोड़ दिया गया. इस संबंध में स्थानीय लोगों ने बताया कि ठेका लेने वाली कंपनी एलएंडटी ने लेवी देकर मजदूरों को छुड़ाया. वहीं पुलिस का दावा है कि उनके दबिश के कारण नक्सली मजदूरों को छोड़ गए. पीएलएफआई नामक नक्सली संगठन ने मजदूरों को अगवा करने की जिम्मेवारी लेते हुए कहा कि अगर लेवी नहीं दिया तो पुल-पुलिया का निर्माण कार्य बंद करना होगा. बताया जाता है कि मोरहर नदी पर इन दोनों पुलों के निर्माण कार्य पर चौथी बार नक्सलियों ने हमला कर लेवी की मांग की है. हर बार नक्सलियों के अलग-अलग संगठनों ने इस निर्माणाधीन पुल को निशाना बनाया है. नक्सली संगठनों की धमकी के कारण इस पुल का निर्माण कार्य लंबे समय से बाधित रहा है. इसके बाद सुरक्षा बलों का एक कैंप पुल निर्माण स्थल के निकट स्थापित किया गया. इसके बावजूद नक्सलियों ने बेस कैम्प में घुसकर चार मजदूरों को अगवा कर लिया.

गया जिले में कई पुल-पुलिया व सड़कें नक्सलियों के आतंक या लेवी की मांग के कारण बंद पड़ी हैं. शेरघाटी अनुमंडल के चिताब गांव के पास मोरहर नदी पर बन रहे पुल का निर्माण कार्य भी रुका है. नक्सलियों ने इस पुल का ठेका लेने वाली कंपनी से इतना लेवी मांगा कि कंपनी ने काम ही बंद कर दिया. 26 मार्च 2017 से इस पुल का निर्माण कार्य ठप है. हल्दिया से वाराणसी तक पाइप लाइन बिछाने वाली कम्पनी गेल इंडिया के मोहनपुर स्थित कैंप पर 15 मार्च 2017 को नक्सलियों ने हमला कर मजदूरों के साथ मारपीट की. यहां भी लेवी का नहीं दिया जाना ही मुख्य कारण था. इसके कुछ दिन बाद ही इसी कम्पनी के गुरुआ स्थित कैम्प पर नक्सलियों ने हमला कर काम बंद करा दिया. इसी प्रकार उत्तर कोयल नहर परियोजना में गुरुआ के पास काम कर रहे ठेका कम्पनी के कैम्प पर नक्सलियों ने हमला कर पोकलेन मशीन जला दी. उन्होंने पर्चा छोड़ा कि लेवी नहीं देने के कारण यह कार्रवाई की गई है. आमस प्रखंड के अकौना के पास नहर पर पुल बना रहे ठेकेदार के लोगों पर भी नक्सलि यों ने हमला कर काम रुकवा दिया. जीटी रोड पर शोभ से धनगाई तक सड़क निर्माण कर रहे रनिया कंस्ट्रक्शन के कैम्प पर नक्सलियों ने कई बार हमला कर काम रुकवा दिया. 24 मार्च 2017 को तीसरी बार नक्सलियों ने इस सड़क का निर्माण कार्य रुकवा दिया. यह कम्पनी जदयू की विधान पार्षद मनोरमा देवी के पति बिन्देश्वरी प्रसाद यादव उर्फ बिन्दी यादव की है.

मगध में चल रही कई विकास परियोजनाओं पर भी नक्सली संगठनों की लेवी ने ग्रहण लगा दिया है. मगध के पांच जिलों गया, औरंगाबाद, नवादा, जहानाबाद, अरवल में दो दर्जन से अधिक परियोजनाएं नक्सलियों के भय से अधूरी पड़ी हैं. यहां तक कि सुरक्षा व्यवस्था पर भी नक्सलियों की लेवी भारी पड़ रही है.■

गुरुजी नहीं तो फिर कैसे होगी पढ़ाई

गणेश दत्त कॉलेज बेगूसराय का सबसे पुराना एवं प्रतिष्ठित कॉलेज माना जाता है. यह पीजी सेन्टर है, जहां इन्टर से स्नातकोत्तर तक की पढ़ाई होती है. इस कॉलेज में छात्र-छात्राओं की संख्या 23 हजार है. प्राध्यापकों के 105 पद स्वीकृत हैं, जिसमें मात्र 28 कार्यरत हैं. 77 पद रिक्त हैं. उसी प्रकार नॉन टीचिंग के 74 पद स्वीकृत हैं, जबकि 33 कार्यरत हैं और 41 पद रिक्त हैं. कॉलेज में अर्थशास्त्र, गणित एवं भूगोल विषय में एक भी प्राध्यापक नहीं हैं, फिर भी नामांकन एवं परीक्षा जारी है.

सुरेश चौहान/अरुण राय

नीतीश सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति के कारण उच्च शिक्षा प्राप्त करनेवालों की संख्या में आशातीत बढ़ोतरी हुई है. लेकिन शिक्षा विभाग की उदासीनता के कारण प्रदेश के अधिकतर कॉलेज नामांकन एवं प्रमाणपत्र वितरण का केंद्र बनकर रह गए हैं. प्राध्यापकों की भारी कमी के कारण गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कपोल-कल्पना बनकर रह गई है. कुछ कॉलेजों में तो कई विषयों में एक भी प्राध्यापक नहीं हैं, फिर भी उस विषय में विद्यार्थियों का नामांकन हो रहा है और विद्यार्थी पढ़ाई किए बिना ही परीक्षा दे रहे हैं.

यूं तो प्रदेश के अधिकतर कॉलेजों में शिक्षा की स्थिति काफी चरमरा गई है. बानगी के तौर पर ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के बेगूसराय जिले के अंगीभूत कॉलेजों की गिरती शिक्षा व्यवस्था को आप देख सकते हैं. बेगूसराय में उक्त विश्वविद्यालय के 5 अंगीभूत कॉलेज हैं. इन कॉलेजों में छात्र-छात्राओं की संख्या करीब 60 हजार है और प्राध्यापकों की संख्या मात्र 57 है. विद्यार्थी कॉलेज में पढ़ना चाहते हैं, लेकिन पढ़ाने वाले नहीं हैं. प्रयोगशालाओं में ताले लटके हैं. खेल मैदान वीरान हैं. पढ़ाई और खेलकूद के अभाव में असीम ऊर्जा से लबरेज छात्र-छात्राएं अपने लक्ष्य को हासिल करने में विफल साबित हो रही हैं. उसी प्रकार नॉन टीचिंग स्टाफ भी मात्र 109 हैं. इन कॉलेजों में प्राध्यापकों के स्वीकृत पद 247 हैं, जिसमें 190 पद रिक्त हैं. नॉन टीचिंग के स्वीकृत पद 274 हैं, जिसमें 165 पद रिक्त हैं. नियमों से खिलवाड़ होने के बावजूद विश्वविद्यालय प्रशासन मौन साधे है. नियमानुसार 75 प्रतिशत उपस्थिति वाले छात्रों को ही फाइनल परीक्षा के लिए भेजा जाता है, लेकिन इन 5 कॉलेजों मे कई विषयों में एक भी प्राध्यापक नहीं होने के कारण क्लास चलती ही नहीं हैं. ऐसे में 75 प्रतिशत उपस्थिति की बात तो शिक्षा व्यवस्था के साथ मजाक ही है.

जीडी कॉलेज, बेगूसराय

गणेश दत्त कॉलेज बेगूसराय का सबसे पुराना एवं प्रतिष्ठित कॉलेज माना जाता है. यह पीजी सेन्टर है, जहां इन्टर से स्नातकोत्तर तक की पढ़ाई होती है. इस कॉलेज में छात्र-छात्राओं की संख्या 23 हजार है. प्राध्यापकों के 105 पद स्वीकृत हैं, जिसमें मात्र 28 कार्यरत हैं. 77 पद रिक्त हैं. उसी प्रकार नॉन टीचिंग के 74 पद स्वीकृत हैं, जबकि 33 कार्यरत हैं और 41 पद रिक्त हैं. कॉलेज में अर्थशास्त्र, गणित एवं भूगोल विषय में एक भी प्राध्यापक नहीं हैं, फिर भी नामांकन एवं परीक्षा जारी है. एसबीएसएस कॉलेज बेगूसराय में छात्र-छात्राओं की संख्या लगभग 18 हजार है. प्राध्यापकों के स्वीकृत पद 42 हैं, जबकि कार्यरत मात्र 10 हैं. 32 पद रिक्त हैं. यहां नॉन टीचिंग स्टाफ के 83 पद स्वीकृत हैं, जबकि कार्यरत 36 हैं. 47 पद रिक्त हैं. प्राचार्य का पद भी रिक्त है. इस कॉलेज में फिजिक्स, मैथ, अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, इतिहास, उर्दू, गृह विज्ञान, बांग्ला एवं कॉमर्स विषयों में एक भी प्राध्यापक नहीं हैं. लेकिन सभी विषयों में नामांकन एवं परीक्षा जारी है.

जिले का एकमात्र अंगीभूत महिला कॉलेज है श्रीकृष्ण महिला कॉलेज. कॉलेज में छात्राओं की संख्या 10 हजार है. प्राध्यापकों के 27 स्वीकृत पद हैं. 7 पदों पर प्राध्यापक कार्यरत हैं और 20 पद रिक्त हैं. प्राचार्य का पद भी रिक्त है. नॉन टीचिंग स्टाफ के 30 पद स्वीकृत हैं. 15 कार्यरत हैं जबकि 15 पद रिक्त हैं.

मात्र 4 प्राध्यापकों के सहारे कॉलेज कैसे चलाया जा रहा है? सुशासन की पोल खोलने के लिए ये तथ्य काफी हैं. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की बजाय छात्र-छात्राओं के भविष्य के साथ इससे ज्यादा क्रूर मजाक भला और क्या हो सकता है. पांचवां अंगीभूत कॉलेज है रामचरित्र सिंह कॉलेज, मंझौल. यहां प्राध्यापकों के 24 पद स्वीकृत हैं, जिसमें मात्र 8 पर प्राध्यापक कार्यरत हैं.

अयोध्या प्रसाद सिंह स्मारक कॉलेज बरौनी राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, उर्दू, संस्कृत, म्यूजिक, अर्थशास्त्र, रसायनशास्त्र एवं बॉटनी विषयों में एक भी प्राध्यापक नहीं हैं. इस कॉलेज की आर्थिक स्थिति भी नाजुक है. सरकारी आदेशानुसार छात्राओं से छात्र कोष का शुल्क नहीं लेना है. सरकार उक्त मद की राशि का अनुदान देती है, जो कभी समय से नहीं मिलती है. यहां बिजली, टेलिफोन के बिल का भुगतान भी कई माह से लंबित है. वर्गकक्ष में पंखा तक नहीं लगा है. राशि के अभाव में परिसर की सफाई भी नहीं होती है. हालत ये है कि यहां दैनिक कार्यों के लिए कार्यालय में कागज, पिन, कार्बन तक उपलब्ध नहीं हैं.

बेगूसराय का चौथा अंगीभूत कॉलेज है. कॉलेज में छात्र-छात्राओं की संख्या 5 हजार है. प्राध्यापकों के 49 पद स्वीकृत हैं, जिसमें सिर्फ 4 पदों पर प्राध्यापक कार्यरत हैं. 45 पद रिक्त है. नॉन टीचिंग स्टाफ के भी 49 पद स्वीकृत हैं, मात्र 6 पदों पर स्टाफ कार्यरत हैं. 43 पद रिक्त हैं. यहां प्राचार्य का पद भी रिक्त है. कॉलेज में अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, फिजिक्स, केमिस्ट्री, बॉटनी, जूलॉजी एवं उर्दू विषयों में एक भी प्राध्यापक नहीं है. यहां एक यक्ष प्रश्न यह है कि मात्र 4 प्राध्यापकों के सहारे कॉलेज कैसे चलाया जा रहा है? सुशासन की पोल खोलने के लिए ये तथ्य काफी हैं. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की बजाय छात्र-छात्राओं के भविष्य के साथ इससे ज्यादा क्रूर मजाक भला और क्या हो सकता है. पांचवां अंगीभूत कॉलेज है रामचरित्र सिंह कॉलेज, मंझौल. यहां प्राध्यापकों के 24 पद स्वीकृत हैं, जिसमें मात्र 8 पर प्राध्यापक कार्यरत हैं. 16 पद रिक्त हैं. नॉन टीचिंग स्टाफ के 38 पद स्वीकृत हैं, जिसमें 19 पद पर कार्यरत हैं. इस कॉलेज में इतिहास, राजनीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, भूगोल, हिन्दी, बॉटनी, मैथ विषयों में एक भी शिक्षक नहीं है, जबकि कॉलेज में छात्र-छात्राओं की संख्या 7500 है. इसके बावजूद सभी विषयों में नामांकन एवं परीक्षा जारी है. बेगूसराय में अंगीभूत कॉलेजों की इस शैक्षणिक बदहाली के आधार पर ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के शिक्षा की स्थिति की कल्पना की जा सकती है, जहां छात्र-छात्राएं बिना पढ़े ही डिग्री प्राप्त कर रहे हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

बच्चे के लिए स्तनपान जरूरी
ariskon
ariskon Pharma Pvt.Ltd.

डॉ. यू.के. मिश्रा (BAMS)
गंगा मेडिकल हॉल, नियर जगजीवन कॉलेज, गया
गया जगजीवन कॉलेज के पास गंगा मेडिकल हॉल में प्रेक्टिस कर रहे डॉ. यू.के मिश्रा ने अपनी बात रखते हुए बताया कि जन्म से तीन महीने तक शिशु की देखभाल बड़े ध्यान से करने की आवश्यकता है। बच्चे के जन्म लेने के बाद जितनी जल्दी हो सके बच्चे को मां का दूध पिलाना चाहिए। बच्चे को मां का पहला दूध (कोलोस्ट्रम) पीने से जीवन जीने की शक्ति मिलती है और मां के दूध में पाये जाने वाले तत्व पौष्टिकता देने के साथ-साथ बच्चे को कई रोगों और रोग को फैलने से बचाते हैं। बच्चे को पहले दिन से ही दो-तीन घंटे के बाद ही दूध पिला देना चाहिए। जब बच्चा रोने लगे तब उसको मां का दूध पिलाना सबसे अच्छा आहार है। तीन महीने तक के बच्चे को जब तक वह मां का दूध पीता है, उस समय बच्चे को पानी पीने की जरूरत नहीं पड़ती है। मां का दूध ही बच्चे के पूरे भोजन का काम करता है।शुरुआत में दो-तीन महीने बच्चा दूध पीकर अगर उल्टी कर देता है तो इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। जब तक बच्चा मां का दूध पीता है तब तक दूध को हजम करने के लिए बच्चे को किसी घुट्टी या ग्राइप वाटर की जरूरत नहीं है। जब तक बच्चा मां का दूध पीए, तब तक मां को चाहिए कि वह खाना खाने के बाद पानी न पीए. बल्कि बच्चे को दूध पिलाने से 15 मिनट पहले थोड़ा सा पानी पी लें. इसके बाद ही बच्चे को स्तनपान (अपना दूध पिलायें) करायें। ऐसा करने से बच्चे को उल्टी-दस्त नहीं होते हैं। मां को सदा खुश होकर और हर दो से तीन घंटे के अंतर पर बच्चे को दूध पिलाना चाहिए। गुस्से या दिमागी परेशानी में बच्चे को स्तनपान नहीं कराना चाहिए। ■ भारती
ACOBA CAP/SYP/INJ
Methylcobalmin, Lycopene, Multivitamin Multimineral, Ginseng & Antioxident
Carbo - XT
Ferrous Ascorbate with Folic Acid Tab.
AREX
Dextromethorphan, Guaiphenesine Ammonium chloride Cough Syp.
ASRFEN-P
Acedofenac+Paracetamol Serratiopeptidase Tab
ECTALOPAM
Escilalopram oxalate & Clonazepam Tablets
SILIPLEX
Silymarin, Vitamin B-Complex & Lactic acid, Calcium, Bacillus Cap/Syp
NOKSIRA
NOKSIRA Pharma Pvt.Ltd.

बेंच-डेस्क खरीद में 8.28 करोड़ का घोटाला

प्रत्येक मिडिल स्कूल को 19 जोड़े बेंच-डेस्क के लिए मिले थे 57 हज़ार

चौथी दुनिया ब्यूरो

बिहार के किसी सरकारी विभाग की बात करें, हर जगह भ्रष्टाचार का बोलबाला है. इन्हीं में से एक है शिक्षा विभाग. प्राथमिक व मिडिल स्कूलों में इन्फ्रास्ट्रक्चर और भवन निर्माण के नाम पर मिली राशि के बंदरबांट की खबरें अक्सर आती रहती हैं. अब इन स्कूलों में बच्चों के बैठने के लिए बेंच-डेस्क खरीद में भी घोटाला सामने आया है. गया जिले के 1394 मिडिल स्कूलों में बेंच-डेस्क खरीद के लिए 8 करोड़ 28 लाख रुपए की राशि आवंटित की गई थी. गया जिले के प्राथमिक शिक्षा व सर्व शिक्षा अभियान का ऑडिट करने पंहुची कैग की टीम ने भी मिडिल स्कूलों में खरीदे गए बेंच-डेस्क के मामले में आपत्ति दर्ज की है. सीमेंट और छड़ बेचने वाले दुकानों तथा अनेक फर्जी फर्मों के नाम पर करोड़ों रुपए के बेंच-डेस्क खरीद कर सरकारी राजस्व को हानि पंहुचाई गई. इस घोटाले का पता तब चला, जब फर्म के असली मालिक को सेल टैक्स विभाग का नोटिस मिला. वित्तीय वर्ष 2015-16 में बिहार शिक्षा परियोजना के अंतर्गत गया जिले के 1394 मिडिल स्कूलों को बेंच-डेस्क खरीदने के लिए 8 करोड़ 28 लाख रुपए दिए गए.

बिहार शिक्षा समिति के द्वारा चयनित स्कूलों में 19 सेट बेंच-डेस्क की खरीदारी की गई. मिडिल स्कूल के हेडमास्टरों द्वारा विभिन्न फर्मों का फर्जी बिल बनाकर उपयोगिता प्रमाण-पत्र जमा कर दिया गया. सेल टैक्स विभाग ने विष्णु स्टील स्टोर, गया समेत दर्जन भर फर्मों को वैट जमा करने की नोटिस भेजी. इस नोटिस पर विष्णु स्टील स्टोर के मालिक विपतलाल साव ने गया के डीपीओ सर्व शिक्षा अभियान को लिखित शिकायत भेजी. तब इस घोटाले का भंडाफोड़ हो सका. गया जिले के विभिन्न प्रखंडों के 5 मिडिल स्कूलों ने विष्णु स्टील स्टोर के नाम पर फर्जी बिल जमा किया है. 19 सेट बेंच-डेस्क के लिए 50 हजार 222 रुपए का बिल दिया गया है, जिसका वैट 6 हजार 777 रुपए होता है. विष्णु स्टील स्टोर के मालिक ने कहा कि मेरे फर्म के नाम से जाली बिल दिया गया है. बिल पर न तो उनका हस्ताक्षर है और न तो फर्म के किसी कर्मचारी का. अभी तक 8 करोड़ 28 लाख के बेंच-डेस्क खरीद में 32 फर्मों के नाम से मात्र डेढ़ करोड़ के खरीद का बिल दिया गया है. जांच के दौरान अधिकतर बिल फर्जी पाए गए. बताया जाता है कि यह खरीदारी हेडमास्टरों को करनी थी, लेकिन शिक्षा विभाग के अधिकारियों पर दबाव डालकर एक फर्म के मालिक ने गया जिले के 1394 मिडिल स्कूलों में विभिन्न फर्मों के नाम से आपूर्ति कर दी. कुछ स्कूलों के हेडमास्टरों ने अधिकारियों के दबाव में बिना बेंच-डेस्क आपूर्ति किए आपूर्ति दिखा दिया. इस मामले में गया के जीबी रोड स्थित एक फर्म के मालिक का नाम सामने आया है. सौंपे गए फर्जी बिल में औरंगाबाद जिले के कई फर्मों के नाम पर फर्जी बिल जमा किया गया है. गया जिले के आमस प्रखंड के 35, अतरी के 32, बथानी के 43, बेलागंज 72, बोधगया 58, डोभी 46, डुमरिया 59, फतेहपुर 71, गुरारू 48, गुरुआ 67, मानपुर 48, मोहनपुर 63, मोहड़ा 46, नगर प्रखंड 46, नगर निगम 57, परैया 43, शेरघाटी 38, टनकुप्पा 43, टिकारी 98 और वजीरगंज प्रखंड के 75 स्कूलों में बेंच-डेस्क की खरीदारी की गई है. कैग की टीम द्वारा गया जिले के सभी प्रखंडों के प्राइमरी व मिडिल स्कूलों का ऑडिट किया जा रहा है. अधिकतर स्कूलों ने कैग की टीम के सामने अपने दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किए हैं.■

बिहार शिक्षा समिति के द्वारा चयनित स्कूलों में 19 सेट बेंच-डेस्क की खरीदारी की गई. मिडिल स्कूल के हेडमास्टरों द्वारा विभिन्न फर्मों का फर्जी बिल बनाकर उपयोगिता प्रमाण-पत्र जमा कर दिया गया. सेल टैक्स विभाग ने विष्णु स्टील स्टोर, गया समेत दर्जन भर फर्मों को वैट जमा करने की नोटिस भेजी. इस नोटिस पर विष्णु स्टील स्टोर के मालिक विपतलाल साव ने गया के डीपीओ सर्व शिक्षा अभियान को लिखित शिकायत भेजी. तब इस घोटाले का भंडाफोड़ हो सका.

feedback@chauthiduniya.com

CRM
TMT BAR

भूकम्प रोधी
जंग रोधी
ISO 9001 - 2000 Certified Co.
IS:1786:2008
CM/L-5746178
Fe-500
मुख्य खूबियाँ
• बचत
• मजबूती
• शानदार फिनीश
Mfg. : CITY ROLLING MILLS PVT. LTD., PATNA
HELPLINE : 0612-2216770

www.chauthiduniya.com
चौथी दुनिया

कुंठा छोड़ो, हिंदी अपनाओ

अनंत विजय

अभिनेता इरफान खान ने बॉलीवुड में हिन्दी की स्थिति को लेकर जो कहा है, वो गंभीर चिंता का विषय है. अपनी फिल्म 'हिंदी मीडियम' को लेकर उत्साहित इरफान खान के मुताबिक देश की शिक्षा व्यवस्था में अंग्रेजी को प्राथमिकता मिलती है. हमारे देश में लोग अंग्रेजी इस वजह से सीखते हैं कि उन्हें दूसरों पर अपनी श्रेष्ठता साबित करनी होती है. इरफान जोर देकर कहते हैं कि किसी भी भाषा में सिद्धहस्त होना बुरी बात नहीं है, लेकिन जब आप किसी भाषा को सिर्फ इस वजह से सीखने की कोशिश करते हैं कि आप दूसरों पर श्रेष्ठता साबित कर सकें, तो यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण होती है. अंग्रेजी को अन्य भारतीय भाषा की तुलना में प्राथमिकता दिए जाने को वो औपनिवेशिक मानसिकता भी करार देते हैं. इस पृष्ठभूमि में इरफान ने साफ किया कि बॉलीवुड के ज्यादातर अभिनेता अंग्रेजी में सोचते हैं और फिर उसको हिंदी में कार्यान्वयित करते हैं. यहां तक तो ठीक है, लेकिन जब हिंदी का सारा कारोबार अंग्रेजी में होने लगे, हिंदी की लिपि बदलने की कोशिश हो, तो वह चिंता का सबब बन जाती है. यह तथ्य है कि बॉलीवुड की हिंदी की लिपि देवनागरी नहीं है, बल्कि रोमन है. कहा तो यहां तक जाता है कि जब कोई कहानीकार किसी प्रोड्यूसर के पास या फिर अभिनेता के पास अपनी कहानी लेकर जाता है, तो उससे कहानी को देवनागरी में नहीं रोमन में लिखकर देने को कहा जाता है. अभिनेता और अभिनेत्रियों को भी संवाद रोमन में लिखकर दिए जाते हैं. यह स्थिति सचमुच हमें सोचने पर विवश कर देती है.

कुछ दिनों पहले अभिनेता मनोज वाजयेपी ने भी कुछ इसी तरह की बातें की थीं और उन्होंने तो यहां तक कह दिया था कि अगर उनके पास देवनागरी में कहानी नहीं आती है, तो वो उसको सुनने या पढ़ने से मना कर देते हैं. लेकिन मनोज वाजपेयी जैसे अभिनेता उंगलियों पर गिने जा सकते हैं. सवाल यही है कि हिंदी को लेकर बॉलीवुड में उदासीनता का माहौल क्यों है. क्यों देवनागरी को लेकर अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के बीच हिकारत का भाव रहता है. इसकी जो सबसे बड़ी वजह सामने आती है, वह है नए अभिनेताओं का अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों से पढ़ा होना. हिंदी तो वो उतना ही जानते समझते हैं, जितना जरूरी होता है. उस भाषा को लेकर उनके मन में किसी तरह का अनुराग नहीं है, जिसको बोलने वाले उनको पलकों पर बिठाए रखते हैं, उनको स्टार बनाते हैं. यहां बात सिर्फ पलकों पर बिठाने की नहीं है, यहां तो बात सिनेमा के अर्थशास्त्र की भी है. इन सितारों को करोड़ों की कमाई भी इन्हीं हिंदी भाषी प्रदेशों के दर्शकों से होती है. कारोबारी ईमानदारी भी कहती है कि आप जिस भाषा से कमाई कर रहे हैं, उस भाषा के प्रति आपकी एक जिम्मेदारी तो बनती ही है उसको सहेजने, संजोने और संवर्धित करने का फर्ज भी बनता है. लेकिन हमारे सिनेमा के सितारों को भाषा से क्या लेना देना, उनको तो मतलब होता है अपने स्टारडम से और अपनी फिल्मों की कमाई से. वो उनको रोमन में संवाद बोलकर भी मिल जाती है.

एक जमाना था, जब हिंदी फिल्मों के गानों में खालिस हिंदी की पदावलियों और शब्दालियों का उपयोग होता था. पंडित नरेन्द्र शर्मा का लिखा गाना, जिसे लता मंगेशकर की आवाज ने अमर कर दिया. उसके शब्दों पर गौर करें– ज्योति कलश छलके/हुए गुलाबी, लाल सुनहरे/रंग दल बादल के. गीतकार की लेखनी यहीं नहीं रुकती है. आगे पंडित जी लिखते हैं–/घर आंगन वन उपवन उपवन/करती ज्योति अमृत के सींचन/मंगल घट ढल के. अब यहां शब्दों के चयन पर गौर फर्माया जाए. इन दिनों अगर कोई ऐसा गीत लिखकर ले जाए, तो संगीतकार तो संगीतकार फिल्मकार भी उसे रद्दी के टोकरे में फेंक देगा.

एक जमाना था, जब हिंदी फिल्मों के

गानों में खालिस हिंदी की पदावलियों और शब्दालियों का उपयोग होता था. पंडित नरेन्द्र शर्मा का लिखा गाना, जिसे लता मंगेशकर की आवाज ने अमर कर दिया. उसके शब्दों पर गौर करें- ज्योति कलश छलके/हुए गुलाबी, लाल सुनहरे/रंग दल बादल के. गीतकार की लेखनी यहीं नहीं रुकती है. आगे पंडित जी लिखते हैं-/घर आंगन वन उपवन उपवन/करती ज्योति अमृत के सींचन/मंगल घट ढल के. अब यहां शब्दों के चयन पर गौर फर्माया जाए. इन दिनों अगर कोई ऐसा गीत लिखकर ले जाए, तो संगीतकार तो संगीतकार फिल्मकार भी उसे रद्दी के टोकरे में फेंक देगा. संभव है कि अभिनेता और अभिनेत्री भी इसको अपने पर फिल्माने से मना कर दें. लेकिन पंडित नरेन्द्र शर्मा ने जो रच दिया वो आज भी लोग चाव से सुनते हैं. इसे लता मंगेशकर के बेहतरीन गानों में से एक माना जाता है. दो पंक्तियों पर और गौर करने की जरूरत है- पात पात बिरबा हरियाला/धरती का मुख हुआ उजाला/सच सपने कल के. इसी गाने में अंबर, कण जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया है. तो कहना कि कठिन हिंदी के श्रोता या दर्शक नहीं है, यह बिल्कुल गलत है. अब तो फिल्म के गीतों की क्या स्थिति होती जा रही है, इसपर कुछ कहना व्यर्थ है. सरकाय ले खटिया से लेकर लड़की पटाय ले मिस्ड कॉल से, जैसे बोल लिखे जा रहे हैं.

इस तरह की हिंदी को लिखने वाले लगातार ये तर्क देते हैं कि हमारे युवा इसको पसंद करते हैं. बहुत विनम्रतापूर्वक ये सवाल उठाना चाहता हूं कि क्या ऐसा कोई सर्वेक्षण हुआ है, जिसमें ये पता चला हो कि हिंदी प्रदेशों के युवा अंग्रेजी मिश्रित हिंदी पढ़ना, देखना, सुनना चाहते हैं. इसका उत्तर है, नहीं. युवाओं के कंधे पर बंदूक रखकर हिंदी को जख्मी करने का ये उपक्रम समझ से परे है. बल्कि हमें तो लगता है कि ऐसा करके हम अपने युवाओं को कमतर आंकते हैं. पाठकों को याद होगा कि जब अमिताभ बच्चन 'कौन बनेगा करोड़पति' की हॉट सीट पर बैठते हैं, तो वे विशुद्ध हिंदी बोलते हैं और उनके संवाद हर किसी की जुबान पर होते हैं. पंचकोटि जैसे शब्द को लोग समझने लगे. हो सकता है कि ये अमिताभ बच्चन की ताकत हो, लेकिन हिंदी को समझने में लोगों को दिक्तत तो नहीं आई. कहीं किसी भी कोने अंतरे से ये आवाज तो नहीं आई कि इतनी कठिन हिंदी क्यों बोली जा रही है. ऐसा भी नहीं कि उस कठिन हिंदी वाले कार्यक्रम को भारत के युवाओं ने देखना छोड़ दिया. दरअसल, हिंदी को कठिन और आसान के खांचे में बांटने की कोशिश ही गलत है. बोलचाल की हिंदी और साहित्य की हिंदी को अलग कर देखने की प्रवृत्ति ने भाषा का नुकसान किया. नुकसान तो हर गली मुहल्ले में खुले कांन्वेंटनुमा अंग्रेजी स्कूलों ने भी किया. अब अपनी हिंदी को लेकर लोगों के मानस में एक स्पंदन हुआ है. जरूरत इस बात की है कि हम अपनी भाषा पर गर्व करें, उसको गर्व के साथ अपनाएं और बढ़ाएं. हिंदी को लेकर मन में पलनेवाली कुंठा को दूर भगाएं. ■

anant.ibn@gmail.com

सूचना का अधिकार
RIGHT TO INFORMATION

सूचना का अधिकार, आपका हथियार

भारत एक लोकतांत्रिक देश है. लोकतांत्रिक व्यवस्था में आम आदमी ही देश का असली मालिक होता है. इसलिए जनता को ये जानने का हक़ है कि जो सरकार उसकी सेवा के लिए बनाई गई है, वो कैसे, कहां और क्या काम कर रही है. इसके साथ ही हर व्यक्ति इस सरकार को चलाने के लिए टैक्स देता है. इसलिए भी नागरिकों को ये जानने का हक़ है कि उनका पैसा कहां खर्च किया जा रहा है. जनता को ये जानने का अधिकार ही सूचना का अधिकार है. 1976 में राज नारायण बनाम उत्तर प्रदेश के मामले में उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद-19 में वर्णित सूचना के अधिकार को मौलिक अधिकार घोषित किया था. अनुच्छेद-19 के अनुसार, हर नागरिक को बोलने और अभिव्यक्त करने का अधिकार है. उच्चतम न्यायालय ने कहा कि जनता जब तक जानेगी नहीं, तब तक अभिव्यक्त नहीं कर सकती. 2005 में देश की संसद ने एक क़ानून पारित किया, जिसे सूचना का अधिकार अधिनियम-2005 के नाम से जाना जाता है. इस अधिनियम में ये व्यवस्था की गई है कि किस प्रकार

सभी सरकारी विभाग, पब्लिक सेक्टर यूनिट, किसी भी प्रकार की सरकारी सहायता से चल रहीं ग़ैर सरकारी संस्थाएं, शिक्षण संस्थाएं आदि इसमें शामिल हैं. पूर्णतः निजी संस्थाएं इस क़ानून के दायरे में नहीं हैं, लेकिन यदि किसी क़ानून के तहत कोई सरकारी विभाग किसी निजी संस्था से कोई जानकारी मांग सकता है, तो उस विभाग के माध्यम से वह सूचना मांगी जा सकती है (धारा-2 (क) और (ज). हर सरकारी विभाग में एक या एक से अधिक लोक सूचना अधिकारी बनाए गए हैं. ये वे अधिकारी हैं, जो सूचना के अधिकार के तहत आवेदन स्वीकार करते हैं, मांगी गई सूचनाएं एकत्र करते हैं और उन्हें आवेदनकर्ता को उपलब्ध कराते हैं.

नागरिक सरकार से सूचना मांगेंगे और किस प्रकार सरकार जवाबदेह होगी. सूचना का अधिकार अधिनियम हर नागरिक को अधिकार देता है कि कोई भी सरकार से सवाल पूछ सकता है या कोई भी सूचना ले सकता है. किसी भी सरकारी दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति ली जा सकती है और किसी भी सरकारी दस्तावेज़ की जांच कराई जा सकती है. साथ ही किसी भी सरकारी काम की जांच कराई जा सकती है या किसी भी सरकारी काम में इस्तेमाल सामग्री का प्रमाणित नमूना लिया जा सकता है.

सभी सरकारी विभाग, पब्लिक सेक्टर यूनिट, किसी भी प्रकार की सरकारी सहायता से चल रहीं ग़ैर सरकारी संस्थाएं, शिक्षण संस्थाएं आदि इसमें शामिल हैं. पूर्णतः निजी संस्थाएं इस क़ानून के दायरे में नहीं हैं, लेकिन यदि किसी क़ानून के तहत कोई सरकारी विभाग किसी निजी संस्था से कोई जानकारी मांग सकता है, तो उस विभाग के माध्यम से वह सूचना मांगी जा सकती है (धारा-2 (क) और (ज). हर सरकारी विभाग में एक या एक से अधिक लोक सूचना अधिकारी बनाए गए हैं. ये वे अधिकारी हैं, जो सूचना के अधिकार के तहत आवेदन स्वीकार करते हैं, मांगी गई सूचनाएं एकत्र करते हैं और उन्हें आवेदनकर्ता को उपलब्ध कराते हैं. लोक सूचना अधिकारी की ज़िम्मेदारी है कि वो 30 दिन के अंदर (कुछ मामलों में 45 दिन तक) सूचना उपलब्ध कराए. अगर लोक सूचना अधिकारी आवेदन लेने से मना करता है, या तय समय सीमा में सूचना नहीं उपलब्ध कराता है अथवा ग़लत या भ्रामक जानकारी देता है, तो देरी के लिए 250 रुपए प्रतिदिन के हिसाब से 25000 तक का जुर्माना उसके वेतन में से काटा जा सकता है, साथ ही उसे सूचना भी देनी होगी. लोक सूचना अधिकारी को ये अधिकार नहीं है कि वो आपसे सूचना मांगने का कारण पूछे (धारा 6(2).

दरअसल, सूचना मांगने के लिए आवेदन फीस देनी होगी. केंद्र सरकार ने आवेदन के साथ 10 रुपए की फीस तय की है, लेकिन कुछ राज्यों में ये अधिक है. ग़ौरतलब है कि बीपीएल कार्ड धारकों से सूचना मांगने की कोई फीस नहीं ली जाती (धारा 7(5). दस्तावेज़ों की प्रति लेने के लिए भी फीस देनी होगी. केंद्र सरकार ने यह फीस 2 रुपए प्रति पृष्ठ रखी है, लेकिन कुछ राज्यों में ये अधिक है. अगर सूचना तय समय सीमा में उपलब्ध नहीं कराई गई है, तो सूचना मुफ्त दी जाएगी (धारा 7(6). यदि कोई लोक सूचना अधिकारी ये समझता है कि मांगी गई सूचना उसके विभाग से संबंधित नहीं है, तो यह उसका कर्तव्य है कि उस आवेदन को पांच दिन के अंदर संबंधित विभाग को भेजे और आवेदक को सूचित भी करे. ऐसी स्थिति में सूचना मिलने की समय सीमा 30 की जगह 35 दिन होगी (धारा 6 (3). लोक सूचना अधिकारी यदि आवेदन लेने से इंकार करता है अथवा परेशान करता है, तो उसकी शिकायत सीधे सूचना आयोग से की जा सकती है. सूचना के अधिकार के तहत मांगी गई सूचनाओं को अस्वीकार करने, अपूर्ण, भ्रम में डालने वाली या ग़लत सूचना देने अथवा सूचना के लिए अधिक फीस मांगने के खिलाफ केंद्रीय या राज्य सूचना आयोग के पास शिकायत कर सकते हैं. लोक सूचना अधिकारी कुछ मामलों में सूचना देने से मना कर सकता है. जिन मामलों में संबंधित सूचना नहीं दी जा सकती, उनका विवरण सूचना के अधिकार क़ानून की धारा-8 में दिया गया है. यदि मांगी गई सूचना जनहित में है, तो धारा-8 में मना की गई सूचना भी दी जा सकती है. जिस सूचना को संसद या विधानसभा को देने से मना नहीं किया जा सकता, उस सूचना को किसी आम आदमी को भी देने से मना नहीं किया जा सकता.

यदि लोक सूचना अधिकारी निर्धारित समय-सीमा के भीतर सूचना नहीं देते हैं या धारा-8 का ग़लत इस्तेमाल करते हुए सूचना देने से मना करता है, या दी गई सूचना से संतुष्ट नहीं होने की स्थिति में 30 दिनों के भीतर संबंधित लोक सूचना अधिकारी के वरिष्ठ अधिकारी यानी प्रथम अपील अधिकारी के समक्ष प्रथम अपील की जा सकती है. यदि आप प्रथम अपील से भी संतुष्ट नहीं हैं, तो दूसरी अपील 60 दिनों के भीतर केंद्रीय या राज्य सूचना आयोग (जिससे संबंधित हो) के पास करनी होती है. ■

अगर आपके पास आरटीआई से संबंधित कोई ख़बर या सवाल है, तो हमें इमेल करें:
rti@chauthiduniya.com

जन्म- 13 जून 1909 मृत्यु- 19 मार्च 1998

"भारतीय राजनीति के इतिहास में जब-जब कम्युनिस्ट आंदोलन की बात होगी, तब-तब एलमकुलम मनक्कल सनकरन (ईएमएस) नंबूदरीपाद याद किए जाएंगे. ईएमएस ने अपना जीवन कम्युनिस्ट आंदोलन को मजबूत करने में गुजार दिया. उन्होंने लगभग 70 साल देश और समाज की सेवा में बिताए. वे न सिर्फ कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्यों में से एक थे, बल्कि उनके कारण ही कम्युनिस्ट पार्टी सियासत से सरकार तक पहुंच सकी. 1957 में ईएमएस नंबूदरीपाद के नेतृत्व में बनी केरल की कम्युनिस्ट सरकार आजाद भारत में किसी राज्य की पहली गैर कांग्रेसी सरकार थी और पहली बार लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकार के वे पहले मुख्यमंत्री थे."

जयंती पर विशेष

ईएमएस नंबूदरीपाद

भारत में कम्युनिस्ट राजनीति के अगुआ

ईएमएस नंबूदरीपाद एक विख्यात मार्क्सवादी तथा लेनिनवादी थे और इन सिद्धांतों का उपयोग उन्होंने हमेशा देश और समाज सेवा के लिए किया. वे एक समाजवादी-मार्क्सवादी विचारक, क्रांतिकारी, लेखक, इतिहासकार और सामाजिक टीकाकार के रूप में भी जाने जाते हैं. भूमि संबंधों, समाज, राजनीति, इतिहास और मार्क्सवाद दर्शन के संबंध में उनका साहित्यिक कार्य भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है. ईएमएस नंबूदरीपाद को एक विख्यात पत्रकार के रूप में भी जाना जाता है. उन्होंने अपने अनुभवों और विचारों पर कई किताबें भी लिखीं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

भारतीय राजनीति के इतिहास में जब-जब कम्युनिस्ट आंदोलन की बात होगी, तब-तब एलमकुलम मनक्कल सनकरन (ईएमएस) नंबूदरीपाद याद किए जाएंगे. ईएमएस ने अपना जीवन कम्युनिस्ट आंदोलन को मजबूत करने में गुजार दिया. उन्होंने लगभग 70 साल देश और समाज की सेवा में बिताए. वे न सिर्फ कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापक सदस्यों में से एक थे, बल्कि उनके कारण ही कम्युनिस्ट पार्टी सियासत से सरकार तक पहुंच सकी. 1957 में ईएमएस नंबूदरीपाद के नेतृत्व में बनी केरल की कम्युनिस्ट सरकार आजाद भारत में किसी राज्य की पहली गैर कांग्रेसी सरकार थी और पहली बार लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई सरकार के वे पहले मुख्यमंत्री थे. भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में भी उनका अहम योगदान रहा है.

ईएमएस नंबूदरीपाद का जन्म 13 जून 1909 को केरल के मलप्पुरम जिले के एलमकुलम पैरिनथलमन्नातुलक में उच्च जाति के नंबूदरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था. ये जब छोटे थे तभी इनके पिता परमेश्वरन नंबूदरीपाद का निधन हो गया. इनका पालन-पोषण इनकी माता ने किया. नंबूदरीपाद की प्रारंभिक शिक्षा पलघाट और त्रिचुर में हुई. इन्होंने कई वर्षों तक संस्कृत का अध्ययन किया. इनकी मां ने इन्हें ऋग्वेद पढ़ाने का निश्चय किया था. लेकिन नंबूदरीपाद छोटी सी उम्र में ही जातिवाद और रूढ़िवाद के खिलाफ लड़ने वाले वीटी भट्टाथिरिपाद, एम आर भट्टाथिरपाद और ऐसे ही अन्य लोगों से प्रभावित थे. वर्ष 1931 में बीए की पढ़ाई के दौरान ही वे कॉलेज छोड़कर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल हो गए और स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से हिस्सा लिया. नंबूदरीपाद 1932 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन से जुड़े. आंदोलन के दौरान उन्हें गिरफ्तार कर तीन वर्ष की सजा सुनाई गई. लेकिन 1933 में ही उन्हें रिहा कर दिया गया.

वर्ष 1934 में नंबूदरीपाद को कांग्रेस समाजवादी पार्टी में ऑल इंडिया ज्वाइंट सेक्रेटरी नियुक्त किया गया. वे प्रदेश कांग्रेस कमेटी के सचिव भी बनाए गए. 1939 में वे कांग्रेस के टिकट पर मद्रास प्रांतीय विधानसभा के सदस्य चुने गए. इसी दौरान नंबूदरीपाद पहली बार मार्क्स के सिद्धांतों से अवगत हुए और फिर केरल में सामंतवाद विरोधी और साम्राज्यवाद विरोधी शक्तिशाली आंदोलन की नींव रखी. वर्ष 1941 में उन्हें भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के केंद्रीय समिति में शामिल किया गया. 1950 में वे

सीपीआई के पोलित ब्यूरो के सदस्य बने और इसके सचिवालय के लिए चुने गए. उन्होंने केरल को एक भाषाई राज्य के तौर पर एकजुट करने में अहम भूमिका निभाई. केरल राज्य बनने के बाद राज्य के पहले विधानसभा चुनाव में कम्युनिस्ट पार्टी प्रमुख दल के तौर पर उभरी और ईएमएस नंबूदरीपाद के नेतृत्व में पहली बार कम्युनिस्ट पार्टी को यहां सत्ता में आने का अवसर मिला. 5 अप्रैल, 1957 को नंबूदरीपाद राज्य के मुख्यमंत्री बने. अपने मुख्यमंत्री कार्यकाल के दौरान उन्होंने शिक्षा और भूमि समयावधि प्रणाली में बड़ा बदलाव किया तथा केरल में प्रबल हो चुके जातिवाद तंत्र के खिलाफ भी संघर्ष किया. हालांकि 1959 में उनकी सरकार को बर्खास्त कर दिया गया. फिर 1960 के मध्यावधि चुनाव के बाद वे विधानसभा में विरोधी दल के नेता बने. इसके बाद 1962 में उन्हें यूनाइटेड सीपीआई का जनरल सेक्रेटरी बनाया गया. 1964 में जब कम्युनिस्ट पार्टी का विघटन हो गया, तो नंबूदरीपाद सीपीआईएम (कम्युनिस्ट पार्टी मार्कसिस्ट) में शामिल हो गए. नंबूदरीपाद ने 1967 में उन्होंने संयुक्त मोर्चा के नेता के रूप में पुन: मुख्यमंत्री का पद सम्भाला और 6 मार्च, 1967 से 1 नवम्बर, 1969 तक इस पद पर कार्य किया. वर्ष 1977 में वे सीपीआईएम के महासचिव निर्वाचित हुए. 19 मार्च 1998 को 89 वर्ष की उम्र में ईएमएस नंबूदरीपाद की मृत्यु हो गई.

ईएमएस नंबूदरीपाद एक विख्यात मार्क्सवादी तथा लेनिनवादी थे और इन सिद्धांतों का उपयोग उन्होंने हमेशा देश और समाज सेवा के लिए किया. वे एक समाजवादी-मार्क्सवादी विचारक, क्रांतिकारी, लेखक, इतिहासकार और सामाजिक टीकाकार के रूप में भी जाने जाते हैं. भूमि संबंधों, समाज, राजनीति, इतिहास और मार्क्सवाद दर्शन के संबंध में उनका साहित्यिक कार्य भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है. ईएमएस नंबूदरीपाद को एक विख्यात पत्रकार के रूप में भी जाना जाता है. उन्होंने अपने अनुभवों और विचारों पर कई किताबें भी लिखीं. ईएमएस संचिका के नाम से चिंथा प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उनकी किताबें मख्य रूप से मलयालम और अंग्रेजी भाषा में हैं. द नेशनल क्योश्चन इन केरला, द विसेन्ट क्योश्चन इन केरला जैसी उनकी किताबें केरल के लोगों के लिए हमेशा उपयोगी बनी रहेंगी. उनकी किताब गांधी एण्ड हिन्दुज्म भी पाठकों के बीच लोकप्रिय है. ■

गंगा सफाई की असलियत

कुमार कृष्णन

गंगा की सफाई के सवाल को लेकर दावे दर दावे किए गए और योजनाएं बना कर उन पर काम करने की बात कही गई. लेकिन सरकारी दावों की असलियत ये है कि अब गंगा का पानी पीने लायक तो दूर, नहाने के लायक भी नहीं बचा है. हाल ही में केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने एक आरटीआई के जवाब में बताया है कि हरिद्वार में गंगा नदी का पानी नहाने के लिए भी सुरक्षित नहीं रह गया है. इस खुलासे के बाद तीन साल से केंद्र में सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के कामकाज पर भी सवाल उठना लाजिमी है. उत्तराखंड में गंगोत्री से लेकर हरिद्वार जिले तक 11 जगहों से पानी की गुणवत्ता की जांच के लिए नमूने लिए गए थे. इन 11 जगहों के बीच गंगा 294 किलोमीटर के इलाके में फैली है. बोर्ड के वरिष्ठ वैज्ञानिक आरएम भारद्वाज के मुताबिक इतने लंबे दायरे में गंगा के पानी की गुणवत्ता की जांच के 4 प्रमुख सूचक रहे, जिनमें तापमान, पानी में घुली ऑक्सीजन, बायलॉजिकल ऑक्सीजन डिमांड और कॉलिफॉर्म शामिल हैं. हरिद्वार के पास के इलाकों के गंगा के पानी में कॉलिफॉर्म और अन्य जहरीले तत्व पाए गए हैं.

नमामि गंगे जैसी योजनाओं में करोड़ो फूंकने के बाद भी उस हरिद्धार में गंगा को साफ नहीं किया जा सका है, जहां से गंगा मैदानी भूभाग में आती है. 1985 में गंगा की सफाई के लिए शुरू की गई गंगा कार्य योजना अब नमामि गंगे के रूप में सरकारी कार्यक्रम का हिस्सा है. बीते तीस सालों के दौरान गंगा सफाई को लेकर विभिन्न योजनाओं के नाम पर बाईस हजार करोड़ से ज्यादा रुपए बहाए जा चुके हैं. आंकड़ों के मुताबिक भाजपा के पिछले दो वर्षों के शासनकाल में गंगा की सफाई के लिए आवंटित 3,703 करोड़ रुपए में से 2,958 करोड़ रुपए खर्च हो चुके हैं, लेकिन इस पतित पावनी नदी की दशा जस की तस बनी हुई है. यही हाल पिछले 30 वर्षों के दौरान घोषित अन्य योजनाओं का भी रहा है. राष्ट्रीय गंगा सफाई मिशन के लिए 2014-15 में 2,137 करोड़ रुपए आवंटित किए गए थे. बाद में इसमें 84 करोड़ रुपए की कटौती कर इसे 2,053 करोड़ रुपए कर दिया गया. लेकिन केंद्र सरकार ने भारी प्रचार-प्रसार के बावजूद सिर्फ 326 करोड़ रुपए खर्च किए और इस तरह 1,700 करोड़ रुपए बिना खर्चे रह गए. वर्ष 2015-16 में भी स्थिति कुछ खास नहीं बदली, अलबत्ता केंद्र सरकार ने प्रस्तावित 2,750 करोड़ रुपए के बजटीय आवंटन को घटाकर 1,650 करोड़ रुपए कर दिया. संशोधित बजट में से 18 करोड़ रुपए 2015-16 में भी बिना खर्च रह गए. ये भी हैरानी की बात है कि मौजूदा वित्त वर्ष (2016-17) में आवंटित 2,500 करोड़ रुपए में से अब तक कितने खर्च हुए हैं, केंद्र सरकार के पास इसका कोई विवरण मौजूद नहीं है.

गौर करने वाली बात ये भी है कि राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण (एनजीआरबीए) की तीन बैठकों में से प्रधानमंत्री ने सिर्फ एक बैठक की अध्यक्षता 26 मार्च, 2014 को की थी. अन्य दो बैठकों की अध्यक्षता केंद्रीय मंत्री उमा भारती ने की थी, जो 27 अक्टूबर, 2014 और चार जुलाई, 2016 को हुई थीं. जबकि मोदी के पूर्ववर्ती मनमोहन सिंह ने इसके ठीक विपरीत अपने दूसरे कार्यकाल के दौरान हुई एनजीआरबीए की सभी तीन बैठकों की अध्यक्षता की थी. ये बैठकें पांच अक्टूबर, 2009, पहली नवंबर, 2010, और 17 अप्रैल, 2012 को हुई थीं. ये तो समय ही बताएगा कि जिस मोदी सरकार ने अगले पांच वर्षों में गंगा पुनर्द्धार और सफाई पर

20,000 करोड़ रुपए खर्चने का वादा किया है, वो अपने वादे पूरे कर पाएगी या नहीं.

भाजपा सरकार बनने के बाद केंद्रीय जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुनरुद्धार मंत्री उमा भारती ने कहा था कि अगले तीन साल के भीतर गंगा साफ हो जाएगी. गंगा को लेकर खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अक्सर भावुकता से भरे बयान देते रहे हैं. लेकिन नमामि गंगे जैसी योजना और लगातार सरकारी कार्यक्रमों में गंगा के माहात्म्य के उल्लेख के बावजूद खुद सरकार ये मान रही है कि गंगा का पानी नहाने के लायक भी नहीं बचा, तो अब तक की कवायदों को किस नजरिए से देखा जाएगा! कानपुर या दूसरे शहरों में औद्योगिक इकाइयों और सीवर आदि की वजह से पूरी तरह प्रदूषित हो चुकी ये नदी अगर हरिद्वार में भी इस हालत में चली गई है, तो इसके लिए कौन जिम्मेवार है?

सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्यों के बोर्डों को फटकार लगाते हुए पूछा है कि वे गंगा में विषाक्त कचरा डालने वाले उद्योगों के खिलाफ कार्रवाई क्यों नहीं कर पा रहे हैं? गौर करने वाली बात है कि गंगा के प्रति सरकारी उदासिनता को लेकर कोर्ट ने 1985 में भी ऐसी ही नाराजगी व्यक्त की थी और गंगा में गंदगी डालने वाले उद्योगों के खिलाफ कार्रवाई करने को कहा था. यदि तब के आदेश पर अमल हो गया होता, तो आज हालात बदल गए होते. चूंकि ऐसा नहीं हुआ इसलिए पिछले 29 सालों में गंगा में बहुत पानी बहने के साथ ही न जाने कितना औद्योगिक कचरा भी बह गया.

राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (एनजीटी) भी हरिद्वार और कानपुर के बीच गंगा में औद्योगिक कचरा प्रवाहित किए जाने को लेकर केंद्र और उत्तर प्रदेश सरकार को फटकार लगा चुकी है. एनजीटी ने गंगा की सफाई के संदर्भ में स्पष्ट रुख नहीं अपनाने के लिए वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड एवं अन्य प्राधिकरणों की खिंचाई की थी. एनजीटी के अध्यक्ष न्यायमूर्ति स्वतंत्र कुमार के नेतृत्व वाली पीठ ने कहा, हर कोई हमारे समक्ष आता है और कहता है कि हमने ये किया है, हमने वह किया है. लेकिन इसका परिणाम शून्य है. जीवनदायी नदियां हमारी सांस्कृतिक धरोहर भी रही हैं. इतिहास गवाह है कि नदियों के किनारे ही ऐसी आधुनिकतम बड़ी सभ्यताएं विकसित हुईं, जो कृषि और पशुपालन पर अवलंबित रहीं. लेकिन जब सभ्यताएं औद्योगिक प्रौद्योगिक उत्पादनों से जुड़ गईं, तब ये अति विकसित व आधुनिक मानी जाने वाली सभ्यताएं मात्रा 70 साल के भीतर ही नदियों जैसी अमूल्य प्राकृतिक संपदा के लिए खतरा बन गईं.

गंगा मुक्ति आंदोलन से जुड़े अनिल प्रकाश बताते हैं कि पर्यावरणविदों ने इस समस्या की ओर ध्यान दिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है. लेकिन सरकार अब भी गंगा को लेकर उदासिन है. गंगा सफाई को लेकर चल रही तमाम योजनाओं के बीच हरिद्वार में औद्योगिक इकाइयों की श्रृंखला खड़ी हो गई. लेकिन उसके बरक्स जलशोधन संयंत्रों और गंदे पानी की निकासी की व्यवस्था करना जरूरी नहीं समझा गया. जहां पर गंगा के किनारे हर दिन पचास हजार से एक लाख लोग नहाने पहुंचते हों, वहां गंदगी और दूसरी समस्याओं का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है. ■

कृष-4 में क्या है ऋतिक रोशन की डिमांड

बॉलीवुड के सुपरहीरो कृष यानी ऋतिक रोशन की अगली फिल्म कृष-4 की हीरोइन अभी तक फाइनल नहीं हुई है. ऋतिक ने एक कार्यक्रम के दौरान बताया, हमारी फिल्म कृष-4 में अभी तक किसी भी हीरोइन को फाइनल नहीं किया गया है, इसकी वजह है कि हम अभी तक फिल्म की कहानी और स्क्रिप्ट पर ही काम कर रहे हैं.

ख़बर है कि ऋतिक कृष-4 में वंडर वुमन जैसा कोई किरदार चाहते हैं. वंडर वुमन के किरदार को फिल्म से जोड़ने का आइडिया ऋतिक को हॉलीवुड फिल्म वंडर वुमन का ट्रेलर देखने के बाद आया. हॉलीवुड की यह फिल्म जून में रिलीज होगी. ऋतिक को इस फिल्म का ट्रेलर इतना पसंद आया कि उन्होंने पापा राकेश रोशन से फिल्म में ऐसे ही एक किरदार की डिमांड की है, जो फिल्म में कृष की मदद कर सके.

ये हैं सच्ची कहानियों पर बनी बॉलीवुड की बेहतरीन फिल्में

प्रवीण कुमार
feedback@chauthiduniya.com

बॉलीवुड में हर साल लव, रोमांस और फुल एक्शन की ढेरों फिल्में रिलीज होती हैं, लेकिन अब बॉलीवुड में काफी बदलाव देखने को मिल रहे हैं. फिर वह चाहे वीएफएक्स का कमाल हो या फिर सच्ची घटनाओं पर बनी फिल्में. जी हां, कई डायरेक्टर्स अब असल जिंदगी पर आधारित फिल्में बना रहे हैं और ये फिल्में बॉक्स ऑफिस पर जमकर पैसा भी कमा रही हैं. अच्छी फिल्म बनाने के लिए सिर्फ एक्शन और कॉमेडी की हमेशा जरूरत नहीं होती, बल्कि कहानी को अगर अच्छा डायरेक्टर और सही एक्टर मिल जाए तो असल ज़िंदगी पर बनी फिल्में, काल्पनिक कहानियों से कहीं ज्यादा दमदार साबित होती हैं. पिछले कुछ समय से लगातार कई बायोपिक फिल्में बनीं, जो बॉक्स ऑफिस पर अच्छी कमाई के साथ-साथ हिट भी हुईं. हाल में असल जिंदगी पर बनी कुछ फिल्में जैसे एयरलिफ्ट, रुस्तम, नीरजा, अलीगढ़, द गाज़ी अटैक और दंगल इसके उदाहरण हैं. इसके अलावा काफी समय से बॉलीवुड में असल ज़िंदगी की कहानियों पर आधारित फिल्में बनती आ रही हैं और बॉक्स ऑफिस पर सफल भी रही हैं. आइए जानते हैं बॉलीवुड की कौन सी फिल्म किस घटना पर आधारित है.

बॉर्डर

इस फिल्म की कहानी एक सत्य घटना से प्रेरित थी. इस फिल्म में 1971 में भारत-पाकिस्तान के युद्ध को डायरेक्टर जेपी दत्ता ने काफी ख़ूबसूरती से दर्शाया है. फिल्म की कहानी 1971 में हुए भारत-पाकिस्तान की लड़ाई से प्रेरित है, जहां राजस्थान के लांग्वला पोस्ट पर 120 भारतीय जवान पूरी रात पाकिस्तान की टांक रेजीमेंट का बहादुरी से सामना करते हैं. बॉर्डर फिल्म में सनी देओल, सुनील शेट्टी और अक्षय खन्ना के किरदार को दर्शकों ने काफी पसंद किया था.■

वंस अपॉन ए टाइम इन मुंबई

मिलन लथूरिया की यह फिल्म मुंबई के अंडरवर्ल्ड की दुनिया को काफी करीब से दिखाती है. हाजी मस्तान और दाउद इब्राहिम के जीवन पर बनी यह फिल्म अंडरवर्ल्ड के काले कारोबार को सामने लाती है. फिल्म में एक डॉन की ईमानदारी व उसूलों को दर्शाया गया था. अपने सशक्त अभिनय से अजय देवगन ने फिल्म में जान डाल दी थी.■

मद्रास कैफे

जॉन अब्राहम स्टारर फिल्म मद्रास कैफे सेना के गौरवपूर्ण इतिहास को दिखाती है, जो विपरीत स्थितियों में दूसरे देश में सफल अभियान चलाती है. यह कहानी है सन् 1980 से 1990 की, जब हमारा देश पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की मौत पर शोक मना रहा था. उस दौरान भारत की शांति सेना श्रीलंका के गृह युद्ध में लिट्टे के ख़तरनाक उग्रपंथियों का बहादुरी से सामना कर रही थी.■

एयरलिफ्ट

फिल्म एयरलिफ्ट में 1990 के गल्फ वॉर को दिखाया गया है, जिसमें कुवैत से बचाकर 1,70,000 हिंदुस्तानियों को देश की धरती पर लाया गया था. यह किसी भी देश द्वारा विदेश में फंसे उसके लोगों को रेस्क्यू करने का सबसे बड़ा ऑपरेशन था. फिल्म में अक्षय कुमार ने भारतीय मूल के बिजनेसमैन रंजीत कटियाल की भूमिका बख़ूबी निभाई है. उनके प्रयासों से ही इन भारतीयों को बचाया जा सका था.■

दंगल

महावीर सिंह फोगाट की कहानी पर फिल्म दंगल का निर्माण हुआ. कहानी में फोगाट ने अपनी बेटियों गीता और बबीता को ट्रेनिंग देकर विश्वस्तरीय पुरस्कार विजेता पहलवान बनाया. फोगाट की भूमिका में खुद को परफेक्ट दिखाने के लिए आमिर ने हरियाणवी भाषा सीखी. पहलवानी में भी खुद को माहिर किया और अपनी पर्सनालिटी में भी काफी बदलाव किया.■

पान सिंह तोमर

फिल्म पान सिंह तोमर एक ऐसे शख्स की कहानी है जो सेना के भारतीय राष्ट्रीय खेल के स्वर्ण पदक विजेता पर आधारित है, जो बाद में मजबूरन एक बाग़ी बन जाता है. फ़िल्म का निर्देशन तिग्मांशु धुलिया द्वारा किया गया है और इसमें इरफ़ान खान ने मुख्य भूमिका निभाई है. पान सिंह तोमर एथलीट पान सिंह तोमर की सच्ची कहानी पर आधारित है. इस फिल्म ने 60वें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार 2012 में सर्वश्रेष्ठ फीचर फिल्म और सर्वश्रेष्ठ अभिनेता का पुरस्कार जीता.■

नो वन किल्ड जेसिका

दिल्ली के बहुचर्चित जेसिका लाल मर्डर केस को कैसे कोई भूल सकता है. इसी को आधार बनाकर नो वन किल्ड जेसिका बनाई गई. फिल्म में जेसिका लाल की बहन के रोल में विद्या बालन और जर्नलिस्ट के रूप में रानी मुख़र्जी का अभिनय शानदार था. इस फिल्म को लोगों ने काफी सराहा था.■

गैंग्स ऑफ वासेपुर

वर्ष 2012 में अनुराग कश्यप की फिल्म गैंग्स ऑफ वासेपुर सच्ची घटनाओं पर आधारित है. धनबाद में कोल माइन्स पर कब्जे को लेकर छिड़े गैंगवार के दौरान के कई गैंगेस्टर्स को हूबहू इस फिल्म में दिखाया गया है. यह गैंगवार पर बेस्ड फिल्म है, जिसमें फ़हीम खान और साबिर अंसारी की दुश्मनी को दिखाया गया है. ये वे गुंडे हैं जो आज भी जेल की हवा खा रहे हैं. इनमें से फ़हीम खान आज हजारीबाग़ जेल में बंद है.■

नीरजा

राम माधवानी द्वारा निर्देशित फिल्म नीरजा में सोनम कपूर लीड रोल में नज़र आई थी. यह फिल्म पाकिस्तान में हाईजैक विमान की फ्लाइट अटेंडेंट नीरजा भनोट की सच्ची घटना पर आधारित थी. उस यान में नीरजा ने 300 यात्रियों की जान बचाने के लिए अपनी जान गंवा दी थी. फिल्म में सोनम ने दमदार एक्टिंग से सबका दिल जीत लिया था. ■

द डर्टी पिक्चर

सिल्क स्मिता की जीवनी पर बनी यह फिल्म भी लोगों के मन को ख़ूब पसंद आई थी. हालांकि इस फिल्म के प्रोड्यूसर ने यह भी कहा था कि फिल्म की कहानी पूरी तरह से सिल्क के ऊपर नहीं फिल्माई गई है. इस फिल्म में सिल्क का किरदार विद्या बालन ने निभाया था. साल 2011 की यह काफी लोकप्रिय फिल्म रही थी.■

शूटआउट एट लोखंडवाला

शूटआउट एट लोखंडवाला कहानी एटीएस के चीफ एए खान की है, जो 16 नवंबर 1991 को 400 पुलिसकर्मियों के साथ लोखंडवाला कॉम्प्लैक्स में एक गैंगस्टर माया दोलास का एन्काउंटर करते हैं. अपूर्व लाखिया की इस फिल्म में विलेन का किरदार विवेक ओबेरॉय ने निभाया था जिन्होंने अपनी एक्टिंग से सभी को सरप्राइज कर दिया था. जबकि एए खान का किरदार संजय दत्त ने निभाया था.■

ब्लैक फ्राइडे

अनुराग कश्यप की 1993 मुंबई ब्लास्ट पर बनी इस फ़िल्म को शुरू में सेंसर बोर्ड से रिलीज़ की अनुमति नहीं मिली थी. 2007 में यह फ़िल्म भारत में रिलीज़ हुई. फिल्म में मुंबई के उस काले दिन की हकीकत दिखाई गई है, जब लगातार बम ब्लास्ट ने मुंबईकरों को दहला दिया था.■

अजहर

भारतीय क्रिकेट टीम के विवादों में रहे पूर्व कप्तान मोहम्मद अजहरुद्दीन के जीवन पर आधारित फिल्म बॉलीवुड फिल्म का हिस्सा बनी. इसमें अजहरुद्दीन की भूमिका में इमरान हाशमी नजर आए थे. हालांकि यह फिल्म बॉक्स ऑफिस पर कुछ ख़ास कमाल नहीं दिखा पाई थी.■

एमएस धोनी: दी अनटोल्ड स्टोरी

भारतीय क्रिकेट टीम के कप्तान महेंद्र सिंह धोनी के जीवन पर आधारित इस फिल्म को नीरज पाण्डेय ने बनाया है. इस फिल्म में धोनी का किरदार सुशांत सिंह राजपूत ने बड़े ही अच्छे से निभाया है. सुशांत के सशक्त अभिनय से लगता है कि उन्होंने अपने रोल में कड़ी मेहनत की थी. इस फिल्म ने बॉक्स ऑफिस पर सौ करोड़ से ज्यादा का कारोबार किया है.■

भाग मिल्खा भाग

मिल्खा सिंह के जीवन पर बनी यह फिल्म साल 2013 में आई थी. इस फिल्म में फरहान अख्तर ने मिल्खा के किरदार को बख़ूबी निभाया था. इसके अलावा फिल्म को नेशनल अवार्ड भी मिल चुका है. बता दें, हिंदुस्तान और पाकिस्तान के बंटवारे के समय मिल्खा सिंह के माता-पिता की मौत हो जाती है. इसके बाद किस तरह हर दर्द से जूझने के बाद उन्होंने अपने जीवन में एक मुकाम हासिल किया, वो इस फिल्म की कहानी के जरिए लोगों तक पहुंचाई गई.■

स्पेशल 26

नीरज पांडे की इस फिल्म की कहानी रियल इंसिडेंट पर आधारित थी. इसके तार ओपेरा हाउस में की गई चोरी से मिलते-जुलते हैं. फिल्म में दिखाया गया है कि किस तरह कोई शख्स नकली सीबीआई अफसर बन कर मशहूर ज्वेलरी वाले को करोड़ों का चूना लगाकर गायब हो जाता है. फिल्म में अक्षय कुमार और अनुपम खेर का एक नया रूप आपके सामने देखने को मिलता है.■

शूटआउट एट वडाला

संजय गुप्ता द्वारा रचित और निर्देशित फिल्म जिसमें जॉन अब्राहम, अनिल कपूर, कंगना रनौत जैसे मंजे कलाकारों ने मुख्य भूमिका निभाई है. फिल्म शूटआउट एट वडाला में मुंबई पुलिस मान्या सर्वे नाम के एक डॉन का एनकाउंटर कर देती है. आपको बता दें कि वास्तविकता में जिस डॉन का एनकाउंटर किया गया था, उसका भी नाम मान्या सर्वे ही था. वर्ष 1982 में पुलिस ने मुंबई में स्थापित वडाला नामक एक स्थान पर मान्या को धर दबोचा और उसे मार गिराया था. इस फिल्म ने बॉक्स ऑफिस पर अच्छी-ख़ासी कमाई की थी.■

मैरी कॉम

यदि कुछ करने की जिद हो तो दुनिया की तमाम बाधाएं भी आपका रास्ता नहीं रोक सकती हैं. मैरी कॉम की कहानी को स्क्रीन पर देख यह बात साबित होती है. वे भारत के उस हिस्से की हैं, जहां आजादी के वर्षों बाद भी लोगों को बताना पड़ता है कि वे भारतीय हैं. मैरी कॉम ने एक ऐसा खेल चुना, जिसमें पुरुषों का दबदबा है. उनके परिवार की आर्थिक हालत ऐसी नहीं थी कि उन्हें बॉक्सिंग की प्रैक्टिस के लिए तमाम सुविधाएं मिल पातीं. वहीं, मैरी के पिता भी उनके खेलने का विरोध कर रहे थे. इन तमाम बाधाओं को पार करते हुए मैरी ने विश्व चैम्पियन का खिताब पांच बार अपने नाम किया था. खेल प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार व भाई-भतीजावाद को भी इस फिल्म में बखूबी दिखाया गया है.■

बैंडिट क्वीन

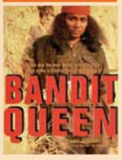

फिल्म बैंडिट क्वीन फिल्म फूलन देवी के जीवन पर बनी है जिसको इस फिल्म के डायरेक्टर शेखर कपूर ने बड़े पर्दे पर दिखाया था. इस फिल्म में फूलन देवी के किरदार को अभिनेत्री सीमा बिस्वास ने खूबसूरती से निभाया.हालांकि साल 1994 में यह फिल्म काफी आलोचनाओं की शिकार भी हुई थी. इस फिल्म के रिलीज़ के दौरान कुछ सीन्स को लेकर काफी विवाद भी हुआ था, लेकिन बाद में इस फिल्म को सेंसर बोर्ड की हरी झंडी मिल गई थी. ■

इसके अलावा फिल्म तलवार, रक्त चरित्र, द गाज़ी अटैक, शाहिद, गुलाब गैंग, नॉट ए लव स्टोरी, रुस्तम, वीरप्पन, 26/11 आदि जैसी फिल्में सच्ची कहानियों पर बन चुकी हैं.